गीतों में "गीता"

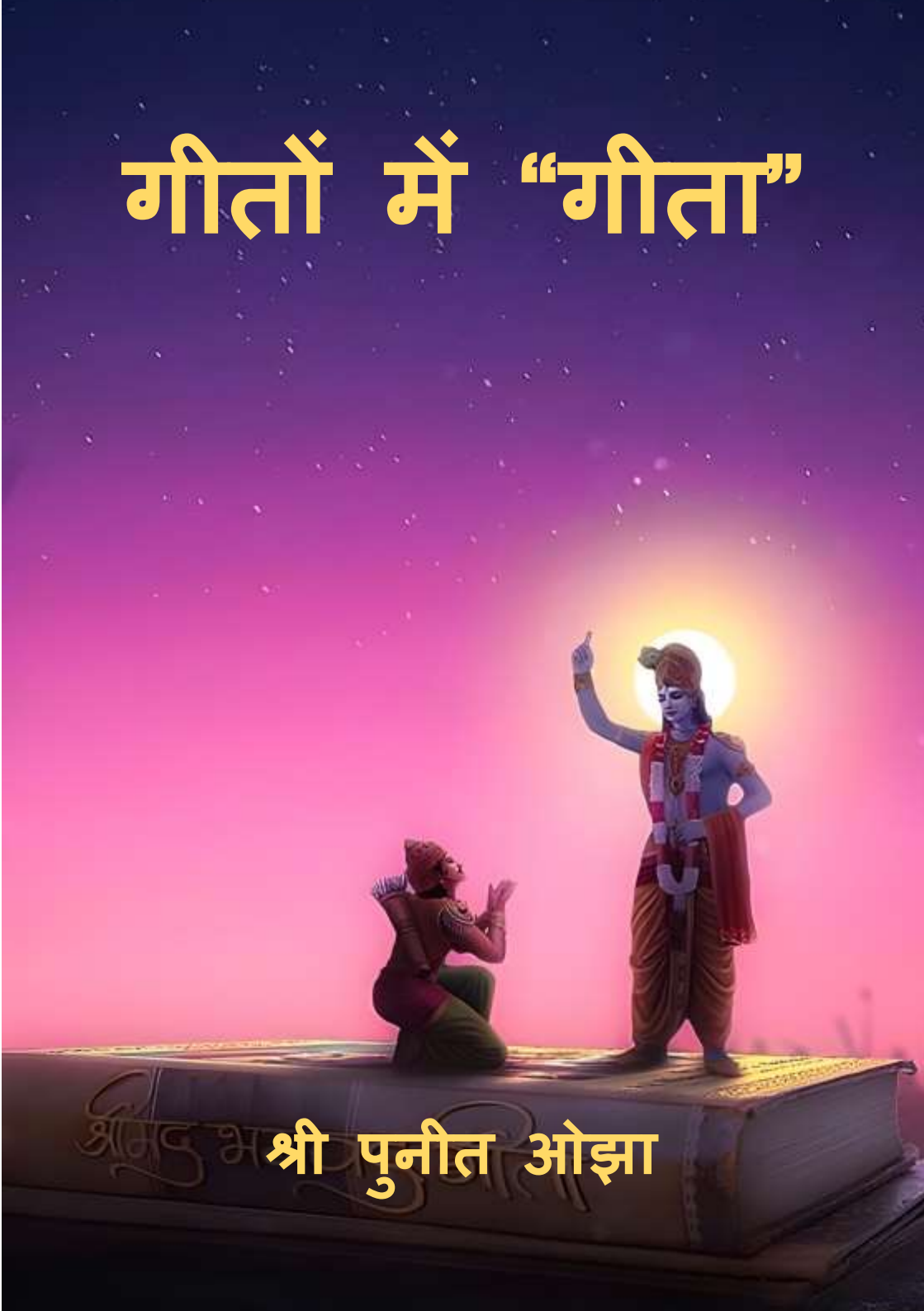

श्री पुनीत ओझा

गीतों में "गीता"

Published by:

Inner Search Foundation
410, Gemstar Commercial Complex,
Ramchandra Lane Extn,
Malad West, Mumbai 400064, India
Website: www.inner-search.org; www.iire.in
Email: iireresearch@isfgroup.in; innersearch@isfgroup.in

© All Rights Reserved with the Author

First Edition: 2024

Price: ₹399/-

ISBN: 978-81-959599-4-5

Editor: Dr. Poonam Kapoor

इंदु प्रभा पुरस्कार २०२४ विजेता कृति

गीतों में "गीता"

श्री पुनीत ओझा

इनर सर्च फाउण्डेशन, मुंबई

‘इंदु प्रभा पुरस्कार’

इनर सर्च फाउंडेशन ने हिंदी भाषा के उभरते लेखकों, कवियों और रचनाकारों को प्रोत्साहित करने के उद्देश्य से 'इंदु प्रभा पुरस्कार' की स्थापना की है। यह पुरस्कार प्रतिवर्ष उस हिंदी कृति को प्रदान किया जाता है, जो मानवीय मूल्यों के उच्च आदर्शों को प्रभावशाली ढंग से रेखांकित करती है। इस पुरस्कार का उद्देश्य हिंदी साहित्य को समृद्ध करना और उन रचनाकारों को प्रेरित करना है, जिनकी कृतियाँ समाज में सकारात्मक बदलाव लाने की क्षमता रखती हैं।

'इंदु प्रभा पुरस्कार' २०२४ श्री पुनीत ओझा को उनके काव्य संग्रह 'गीतों में गीता' के लिए प्रदान किया गया है। 'गीतों में गीता' पुनीत जी की रचनात्मकता और गीता की शिक्षाओं को सरल, सुलभ और प्रभावशाली रूप में प्रस्तुत करती है। गीता जीवन की समस्याओं का समाधान बताती है, और पुनीत जी ने इसे सुंदर कविताओं के माध्यम से प्रस्तुत किया है, जिससे पाठकों को गीता की गूढ़ शिक्षाओं को समझने और अपनाने में सहायता मिलती है।

इनर सर्च फाउंडेशन पुनीत जी की इस अद्वितीय रचना को व्यापक जनसमूह तक पहुंचाने के लिए प्रतिबद्ध है, ताकि अधिक से अधिक लोग इस अमूल्य धरोहर का लाभ उठा सकें और अपने जीवन में सकारात्मक परिवर्तन ला सकें।

श्री कृष्ण के चरणों में अर्पण

“तेरा तुझको अर्पण, क्या लागे मेरा?"

पुनीत ओझा

भूमिका ..... क

गीता से मेरा ज्ञान १

अध्याय १ - अर्जुन विषाद योग ५

अध्याय २ - सांख्य योग ९

अध्याय ४ - ज्ञान-कर्म सन्यास योग ३०

अध्याय ५ - कर्म-सन्यास योग ३८

अध्याय ६ - ध्यान योग ४४

अध्याय ७ - ज्ञान विज्ञान योग ५२

अध्याय ८ - अक्षरब्रह: योग ५८

अध्याय ९ - राज-विद्या राज-गुह्य योग ६३

अध्याय १० - विभूति योग ६९

अध्याय ११ - विश्व रूप दर्शन योग ७५

अध्याय १२ - भक्ति योग ८३

अध्याय १३ - क्षेत्र-क्षेत्रज्ञ योग ८९

अध्याय १४ - गुणत्र्य-विभाग योग ९७

अध्याय १५ - पुरषोत्तम योग १०३

अध्याय १६ - दैवासुरसंपद-विभाग योग..... १०८

अध्याय १७ - श्रद्धात्रय-विभाग योग ११३

अध्याय १८ - मोक्ष-सन्यास योग ११९

भूमिका

“गीतों में गीता” का पूर्ण श्रेय ईश्वर को जाता है, एवं यह कविताओं का संग्रह सम्पूर्णतः उस ईश्वर को समर्पित है। यह उसी ईश्वर की असीम कृपा है जिसके कारण यह कवितायेँ मुझ निमित्त के द्वारा रची गयी हैं। इसकी पहली कविता "गीता से मेरा ज्ञान" मेरे विचारों को दर्शाती है और उसके उपरांत हर एक अध्याय पर एक सरल हिंदी कविता है। हर कविता का आरम्भ और अंत एक समान हैं।

गीता और उसमे मेरी रूचि का श्रेय मैं अपने पिता, श्री भरत ओझा जी को देता हूँ। उन्होंने मुझे कई वर्ष पूर्व, श्री अरविन्द की "एसेज ऑन गीता" दी थी और लिखा था कि, "एक वक़्त आएगा, जब तुम इसे पढोगे।" वह समय आया और आज "गीता" हम दोनों के लिए एक आनंदमई चर्चा का विषय और भक्ति की भेट बन गयी है।

गीता में रूचि के श्रेय के हक़दार मेरे सिंगापुर के "गीता परिवार" के सदस्य भी हैं। असीम जी और सुनीता जी के मार्ग-दर्शन से जो अधयत्मिक उन्नति हुई है, वह अकल्पनीय है। इन सबको मेरा प्रणाम!

कविता की रूचि के लिए मैं अपने नाना, श्री मनुभाई त्रिवेदी जी को श्रेय दूंगा। वह एक न्यायाधीश तो थे ही, पर साथ ही में एक उच्च कोटि के कवि भी थे, जो "गाफिल" के नाम से ग़ज़लें और "सरोद" के नाम से भजन लिखते थे। मैं उन्हें देख नहीं पाया, यह मेरा दुर्भाग्य है, पर उनकी कविता रचने के कुछ गुण ईश्वर ने मुझ में ज़रूर भर दिए।

एक और श्रेय की हक़दार हैं, मेरी माँ, स्वर्गीय श्रीमती भारती ओझा जी। वह एक वकील थी और कवियत्री भी। मुझे गर्व है कि उनके थोड़े से गुण मुझ में समाये हैं और मैं इन कविताओं को रच पाया हूँ।

यह संकलन समर्पित है, मेरी हमसफर, चेतना और मेरे सुपुत्र, आदित्य को। जो मेरे साथ इस सफर का हिस्सा हैं, और मेरे सबसे मजबूत सहारे भी।

इस पुस्तक के प्रकाशन का श्रेय डॉ. पूनम कपूर जी, श्री पवन कपूर जी और उनके इनर सर्च फाउंडेशन के सभी सहकर्मियों को जाता है, जिनके अथक परिश्रम और समर्पण से यह रचना इस स्वरूप में प्रस्तुत की गई है। उनके सहयोग के लिए मैं सदैव उनका कृतज्ञ रहूंगा।

मुझे प्रसन्नता है कि मैं अपने गीता और कविता के प्रेम को एक कर पाया हूँ।

उस ईश्वर की महिमा हम कैसे बयान करें? एक प्रसिद्ध चलचित्र, **"बूँद जो बन गयी मोती"** में **भरत व्यास** ने कुछ ऐसे कहा है-

"हरी हरी वसुंधरा पे, नीला नीला यह गगन,
कि जिसपे बादलों की पालकी उड़ा रहा पवन,
यह किस कवि की कल्पना का चमत्कार है?
यह कौन चित्रकार है, यह कौन चित्रकार?"

बस, उसी चित्रकार को समर्पित हैं यह कवितायें, जिनके हम चित्र हैं!

पुनीत ओझा
सिंगापुर २०२४

गीता से मेरा ज्ञान

जब सोचने बैठा मैं,
कि आखिर गीता पढ़कर क्या पाया ज्ञान? |
और कुछ मिला न मिला,
मिल गयी अपनी असली पहचान || - १

यह पहचान कि मैं,
उसी एक अद्‌वितीय ईश्वर की हूँ संतान |
यह जीवन तो हैं सिर्फ,
उसे पाने का भक्तिमय अभियान || - २

जन्म और मृत्यु से,
आत्मा का कोई नहीं वास्ता |
जंगल से होकर ही है,
जंगल से निकलने का रास्ता || - ३

नींव अगर पक्की हो,
तो मकान नहीं टूटता है |
सेब के बीज डालकर,
आम की आशा मूर्खता है || - ४

कर्मों, गुणों, राग और द्वेष के खेल में,
जीतना भी आखिर हार है |
आसक्ति रहित कर्मों में मिला दो ज्ञान और भक्ति,
तभी पार हैं || - ५

काम, क्रोध और लोभ - ये तीनो नरक के द्वार हैं,
गीता में इस पर बल है |
सत्संग, नाम जप और स्वाध्याय का
निरंतर सेवन ही इन तीनो का हल हैं || - ६

हर दिन लगता है कि हरि-दर्शन के लिए,
आँखें धीरे-धीरे खुल रही हैं |
इतने जन्मों से लगी धूल,
इस मन रूपी आईने से धीरे-धीरे धुल रही है || - ७

अब किस बात का भय,
जब सर्वशक्तिमान ईश्वर सदैव अपने साथ है |
अपने अधिकार में हैं सिर्फ कर्म,
उन कर्मो का फल ना अपने हाथ है || - ८

अब निश्चय कर लिया है,
कि इस पथ से हिलने वाले हम नहीं हैं |
मंज़िल इस जन्म में मिले या अगले में,
इसका कोई गम नहीं है || - ९

आओ अपने मन से मिटा दें,
यह राग, यह द्वेष, यह बुरा और यह अच्छा |
अगर जो माँगा, वो मिल गया तो “हरि कृपा”,
और नहीं मिला तो “हरि इच्छा" || - १०

अध्याय १ - अर्जुन विषाद योग

आज यूँ लगता है कि यह जीवन,
अज्ञान के अंधेरे में है बीता |
जीवन-ज्ञान और विज्ञान की,
सच्ची सीख है भगवद् गीता ||

पहले अध्याय में शुरू में जोश,
और फिर अर्जुन का है विषाद |
इसी की नींव पर है भगवान्,
कृष्ण और अर्जुन का पूरा संवाद ||

सर्वप्रथम अंधे धृतराष्ट्र ने दिव्य,
दृष्टि-युक्त संजय से किया सवाल |
कुरुक्षेत्र के धर्मक्षेत्र में क्या,
कर रहे हैं पांडव और मेरे सौ लाल? ||

गुरुर से भरा दुर्योधन, अपने गुरु,
द्रोणाचार्य से यह वचन बोला |
कौरवों और पांडवों की सेना,
के वीरों का पिटारा खोला ||

भीष्म पितामह ने अपना शंख बजा,
कर युद्ध का किया आगाज़ |
जवाब में कृष्ण और पांडवों के,
दिव्य शंखों की गरज गयी आवाज़ ||

अर्जुन ने अहंकार से कृष्ण से कहा,
कि मुझे दोनों सेनाओं के बीच ले जाए |
मैं भी तो देखूँ कौन है जो उस मुर्ख दुर्योधन,
का साथ देकर मुझसे हैं लड़ने आये? ||

जैसे ही रथ वहा पहुंचा अर्जुन ने,
सामने देखा अपने स्वजनों का पूरा समुदाय |
और वह अपनों के लगाव से,
भ्रमित हो कर, शिथिल हो कर, गिर पड़ा, हाय! ||

और उसने कहा, कि नहीं चाहिए,
हमें विजय, न यह सारा राज-पाठ |
अगर इसको पाने के लिए,
अपनों को ही उतारना पड़े मौत के घाट! ||

इन प्रियजनोंको मार कर, न मुझे पृथ्वी,
ना तीनों लोकों की इच्छा होगी |
क्योकि इन बंधुओं को मार कर,
हम बन जाएंगे पाप के भोगी ||

अपने ही परिवार को मार कर,
हम करेंगे अपने ही कुल का नाश |
कुल-नाश से उत्पन होंगे कई अधर्म, पाप,
और होगा पूरा विनाश ||

और इन अधर्मों से पुरखों की, वर्त्तमान,
और आने वाली पीढ़ियाँ बनेंगी नर्क की वासी |
यह कहकर अर्जुन ने त्याग दिए हथियार,
और उस पर छा गयी कमजोरी और उदासी ||

आओ अपने मन से मिटा दें,
यह राग, यह द्वेष, यह बुरा और यह अच्छा |
अगर जो माँगा, वो मिल गया तो “हरि कृपा”,
और नहीं मिला तो “हरि इच्छा" ||

अध्याय २ - सांख्य योग

आज यूँ लगता है कि यह जीवन,
अज्ञान के अंधेरे में है बीता |
जीवन-ज्ञान और विज्ञान की,
सच्ची सीख है भगवद् गीता ||

दूसरे अध्याय में है भरपूर,
ज्ञान और पूरी गीता का सार |
इसीलिए इसे पढ़ कर उतार लिया,
तो हो जाए बेडा पार ||

उस निराश अर्जुन को दिखाया,
भगवान् ने एक आइना |
पूछा, कहाँ से आयी यह दुर्बलता
और कायरता की भावना? ||

अपने प्रियजनों और गुरुओं को,
कैसे मारे, जिनका है अर्जुन भक्त |
यही बेहतर है कि वह ही मर जाएं,
इससे पहले कि वह बहाये उनका रक्त ||

सब धन-दौलत और राज्य का,
सुख भी उसे दुःख की ओर ले जायँगे |
और इस शोक की अवस्था में,
वह हाथ इस युद्ध को लड़ नहीं पाएंगे ||

भगवान् से विनती कर, उसने माना कि वह,
खो गया है और अब बिना सहारे न संभल सके |
उनका शिष्य बनकर, मांगी भगवान् से राह,
जिस पर वह निश्चय से चल सके ||

इस पुकार को सुन, भगवान् के मुख से,
बही गीता के ज्ञान की झर-झर धारा |
पंडित किसी के लिए शोक नहीं करते,
चाहे वो जीवित हो या स्वर्ग-सिधारा ||

ऐसा कोई काल नहीं हुआ जब हम सब न रहें हों,
क्योंकि आत्मा तो अजर है, आत्मा तो अमर है |
शरीर तो बदलता रहता है, लेकिन इस बदलाव से धीर पुरुष,
को न कोई चिंता, न आशंका, ना ही कोई डर है ||

यह बाहरी बदलाव तो क्षणभंगुर और अनित्य है,
इन्हें सहन करने के सिवा न कोई चारा है |
हर स्तिथि में सम-भाव और इन्द्रियों पर काबू,
ये ही मोक्ष का द्वार, ये ही लक्ष्य हमारा है ||

असत्य कभी अस्तित्व में आता ही नहीं है,
और सत्य कभी मिटता ही नहीं है |
ज्ञानी देखता है इस असत्य मिथ्या के पार और,
सत्य के सिवा उसे कुछ दिखता ही नहीं है ||

जो सारे जगत के कण-कण और,
हम सब में बसता है, उसका विनाश कोई कर नहीं सकता |
जिन्हें युद्ध में मारना है, वह तो शरीर हैं,
आत्मारूपी स्वामी तो कभी मर नहीं सकता ||

यह भी सुन, कि जो समझे कि आत्मा मारती या मरती है,
वह सच को नहीं जानते है |
शरीर मरता है आत्मा नहीं, ज्ञानी तो उसे अजन्मा,
नित्य, शाश्वत और पुरातन मानते हैं ||

जो ज्ञानी यह सच जानता है, वह कैसे किसी को,
मरवा सके या किसी को मार सकता है? |
आत्मा वैसे ही शरीर बदल लेती है,
जैसे कोई नए वस्त्र पाने पर, पुराने वस्त्र उतार देता है ||

आत्मा वह, जिसे न शस्त्र काटे, न आग जलाये,
न पानी भिगोये और न हवा सुखाये |
इसीलिए आत्मा अछेद्य, अक्लेद्य, अशोष्य,
नित्य, सर्वव्यापक, अचल और सनातन कहलाये ||

आत्मा इन्द्रियों और मन के परे है, तभी तो अव्यक्त,
अचिन्त्य और अविषय कहलाती है ||
अगर मृत्यु को मान भी लें, तो शोक कैसा,
मृत्यु के बाद पुनर्जन्म और फिर मौत आती है ||

शरीरो में व्यक्त यह आत्मा, बाद में अव्यक्त हो जाती है,
तो उसका क्या शोक मनाना? |
इतना गूढ़ है यह आत्मा का ज्ञान,
कि इन्द्रियों और मन से इसे असंभव है समझ पाना ||

इस धर्म युद्ध से बड़ा कर्त्तव्य और इससे बड़ा सौभाग्य,
तुझ क्षत्रिय को कब मिल पायेगा? |
और अगर तू भाग खड़ा होगा, तो तेरा यह नाम,
मान-सम्मान, सब मिट्टी में मिल जाएगा ||

जीत कर भोगेगा पृथ्वी का सुख और,
अगर मृत्यु मिली, तो स्वर्ग के द्वार खुल जाएंगे |
सुख-दुःख, हानि-लाभ, जय-पराजय को समान,
मान कर युद्ध कर, पाप तुझे छू नहीं पाएंगे ||

फिर भगवान् ने कर्मयोग की राह दिखाई,
जिस में मनुष्य कर्मों के बंधन से मुक्त हो जाएगा |
निष्काम कर्मयोग के हैं न कोई दुष्प्रभाव,
और इस पर चले एक कदम से भी भय-निवारण हो जाएगा ||

इस पथ के ज्ञानियों की बुद्धि होती है एकाग्र,
और निश्चयात्मिका बुद्धि |
और वो बुद्धि अनेको दिशाओं में दौड़े,
जो हो आसक्ति से भरपूर और जिसमें हो अशुद्धि ||

इसीलिए अर्जुन, तू बनकर निष्कामी, गुणों, द्वंदों,
और योगक्षेम से परे, आत्मा की ओर बढे |
ब्रम्ह-ज्ञानी के लिए वेद हैं निरर्थ,
जैसे छोटे जलाशय हो जाये तुच्छ, जब मिले जलयशय बड़े ||

सिर्फ कर्म पर, न कि कर्म-फल पर, है तेरा अधिकार,
और कभी कर्म को ना त्यागना |
आसक्ति का त्याग, सिद्धि-असिद्धि में समान,
ये ही हैं समत्व योग की भावना ||

इस समत्व बुद्धियोग के आगे सकाम कर्म,
तो बिल्कुल तुच्छ है, यह भगवान् की राय है |
इस योग से ही मिलती है पाप और पुण्य से मुक्ति,
ये ही कर्म-बंधन से छूटने का उपाय है ||

समत्व बुद्धि-युक्त ज्ञानी, कर्मफल को त्याग,
जन्म-मृत्यु के चक्कर से मुक्त हो जाते है |
मोह से मुक्त और बुद्धि को परमात्मा में स्थिर कर,
वह योग से युक्त हो जाते हैं ||

अब अर्जुन के मन में उठा एक सवाल,
जिसके उत्तर की उसने भगवन से करी पुकार |
स्तिथ्प्रग्य मनुष्य के क्या हैं लक्षण,
और कैसे भिन्न है उसका इस दुनिया से व्यव्हार? ||

जो सब कामनाओं को त्याग दें,
और अपनी आत्मा से ही स्वयं के लिए संतुष्टि पाए |
भगवान् का यह मत है कि ऐसा व्यक्ति,
ऐसा ज्ञानी ही स्थिर बुद्धि वाला कहलाये ||

जिसमे न हो राग, द्वेष और क्रोध,
जो न दुखों से घबराये, न सुखों के लिए ललचाये |
जो स्नेहरहित हो कर, शुभ-अशुभ को समता से देखे,
वह मुनि स्थिर बुद्धि कहलाए ||

जो कछुए की तरह अपने अंगरूपी इन्द्रियों,
को जगत के विषयों से अलग कर लेता है |
और फिर विषयों का राग भी मिट जाता है,
जब वह परमात्मा का साक्षात्कार कर लेता हैं ||

बहुत कोशिशों के बावजूद, बुद्धिमान व्यक्ति के मन को,
उपद्रवी इन्द्रियां हर कर ले जाती हैं |
जिस का हो इन्द्रियों पर वश,
और जो हो भगवद-पथ पर, उसकी बुद्धि स्थिर हो जाती है ||

अस्थिर मन से होता है विषयों का चिंतन, चिंतन से आसक्ति,
फिर कामना, और कामना पूरी न होने पर क्रोध आता है |
क्रोध से वह हो जाता है मूढ़, फिर जाती है स्मरण शक्ति,
और होता है बुद्धि का नाश, जिससे पूर्ण विनाश हो जाता है ||

आसक्ति युक्त पुरुष में ना बुद्धि, ना आत्म-चिंतन,
आत्म-चिंतन बिना नहीं शांति और अशांति में सुख कैसा? |
विषयों के पीछे दौड़ती इन्द्रियां, बुद्धि का करे हाल ऐसा,
बिलकुल हवा से खिंचती हुई एक मजबूर नाव के जैसा ||

इसलिए जिसकी इन्द्रियां सब तरह से उसके वश में हो,
उसे ही स्थिर बुद्धि का मानते हैं |
अज्ञानियों की रात को अपनी सुबह,
और अज्ञानियों की सुबह को ज्ञानी अँधेरी रात मानते हैं ||

जैसे नदियों के समाने से समंदर स्थिर रहे,
स्थिर-बुद्धि पुरुष, भोगों से विचलित नहीं होता |
करे कामनाओं को त्याग, रहे ममता, अहंकार,
आसक्ति से दूर, अशांत उसका चित्त नहीं होता ||

यह है उस की स्थिति, जो कभी मोहित नहीं होता,
और जो ब्रम्ह-ज्ञान में स्तिथ है |
जीवन काल और अंतकाल आने पर भी,
वह ब्रम्ह को ही प्राप्त होता है, ये ही सत्य है ||

आओ अपने मन से मिटा दें,
यह राग, यह द्वेष, यह बुरा और यह अच्छा |
अगर जो माँगा, वो मिल गया तो “हरि कृपा”,
और नहीं मिला तो “हरि इच्छा" ||

अध्याय ३ - कर्म-योग

आज यूँ लगता है कि यह जीवन,
अज्ञान के अंधेरे में है बीता |
जीवन-ज्ञान और विज्ञान की,
सच्ची सीख है भगवद् गीता ||

तीसरे अध्याय में भगवान्,
कर्म-योग का मार्ग खोल देते हैं |
कर्म-योग से ही मिले काम से मुक्ति,
यह बात साफ़ बोल देते हैं ||

सबसे पहले तो अर्जुन के मन में आता है,
एक स्वाभाविक सवाल |
अगर ज्ञान है कर्म से बढ़कर,
तो क्यों करना है हमें युद्ध का ख़याल? ||

एक तरफ कर्म, दूसरी तरफ ज्ञान,
यह मन आखिर क्यों न खो जाए |
एक निश्चित पथ पर चलने का आदेश दें,
जिससे मेरा कल्याण हो जाए ||

भगवान् ने कहा कि मुझ तक पहुँचते हैं,
दोनों ही रास्ते |
ज्ञानयोग ज्ञानियों के लिए,
कर्मयोग योगियों के वास्ते ||

यह समझ कि कर्मयोग का मतलब,
ना ही अकर्म ना कर्मो का त्याग ||
प्रकृति गुणों से करती है अपना काम,
जिससे हर क्षण कर्म जाते हैं जाग ||

दम्भी है वह, जो बाहर से करे नियंत्रण,
पर मन से पूरी तरह से भोगी है |
जो मन को वश में करे और अनासक्त कर्म करे,
वह ही सच्चा योगी है ||

शास्त्र-विधि से स्वधर्म करना ही श्रेष्ट है,
क्योंकि जीने के लिए कर्म तो करना ही पड़ेगा |
आसक्ति से रहित, प्रभु का निमित्त मान कर,
कर्म करेगा, तो कर्म-बंधन में नहीं बंधेगा ||

प्रजापति द्वारा रचित कर्म-यज्ञ वह है जिससे,
लोगों का विकास और उनकी कामनाएं पूर्ण हो जाती हैं |
देवताओं की पूजा करके हम उन्हें उबारे और,
उनके आशीर्वाद से हमारी सब इच्छाएं सम्पूर्ण हो जाती हैं ||

यज्ञ द्वारा देवता बिन मांगे ही सब कुछ दे देते हैं,
पर जो बिना बांटे उसका भोग करे, वह तो चोर है |
यज्ञ का प्रसाद खाते हैं श्रेष्ट-जन, और सिर्फ,
शरीर के लिए खाने वालो को मिलता, पाप घनघोर है ||

सब प्राणी अन्न से उत्पन, अन्न का सृजन बरखा से,
बरखा का उदय यज्ञ से और यज्ञ तो कर्मो से उत्पन्न है |
जो इस जीवन-चक्र से परे, शास्त्र के विरुद्ध,
सिर्फ सुख के भोगो के लिए जीता है, व्यर्थ उसका जीवन है ||

और वह मानव कर्त्तव्य से भी ऊपर है, जो आत्मा से,
प्यार करे, जो उस से ही तृप्ति और संतुष्टि पाता है |
क्योंकि उसके लिए कर्म-अकर्म सब सामान हैं,
और वो निस्वार्थ हो कर लोकहित में कर्म किये जाता है ||

भगवान् साफ़-साफ़ कहते हैं कि,
आसक्ति रहित कर्त्तव्य कर्म से हम उन्हें पा जाते है |
लोकसंग्रह के भाव से कर्म कर,
हम राजा जनक जैसे कर्मयोगी के पथ पर आ जाते हैं ||

जिस पथ पर चले श्रेष्ठ, उन्ही के क़दमों पर,
बाकी सब पीछे-पीछे चल पड़ते हैं |
किसी कर्त्तव्य या चाह के न होने पर भी,
श्री कृष्ण खुद कर्म के पथ पर निकलते हैं ||

यदि श्री कृष्ण ने कर्म का पथ छोड़ दिया,
तो सृष्टि भी अकर्म की तरफ बढ़ जायेगी |
लोग भ्रष्ट हो जाएंगे, उलझने बढ़ जाएंगी,
और प्रजा विनाश की ओर निकल जायेगी ||

जैसे अज्ञानी आसक्ति-पूर्ण कर्म करे, ज्ञानी को चाहिए,
कि वो आसक्ति-रहित कर्म करने लगे |
ज्ञानी तो बस सारे कर्म उस ईश्वर के लिए ऐसे करे,
कि अज्ञानी भी उसका आचरण करने लगे ||

अहंकारी अज्ञानी यह मानता है कि वह ही असल में,
कर्म का कर्ता है और इससे मोहित हो जाता है |
सच्चा ज्ञानी जानता है कि कर्म तो प्रकृति,
और गुणों का खेल है, इसी लिए आसक्ति-रहित हो जाता है ||

ज्ञानी वो भी, जो जानकर भी, एक आसक्त,
और मूर्ख अज्ञानी की राह बदलने की कोशिश न करे |
सिर्फ ईश्वर में मन लगाकर, सब कर्मो को समर्पित कर,
आशा और ममता को त्याग कर, अपना कर्म करे ||

जो बिना दोष-बुद्धि के, और श्रद्धा के भाव से, ईश्वर के,
रस्ते पर चले, वह कर्म-बंधन से मुक्त हो जाते है |
वैसे ही जो दोष-बुद्धि से भरपूर, ईश्वर के पथ,
को ठुकराते हैं, उनके जीवन तो अवश्य ही नष्ट हो जाते हैं ||

हर मानव अपनी प्रकृति मतलब स्वभाव के वश में आ कर,
कर्म करता है - फिर वह मुर्ख हो या ज्ञानी |
अपने अंदर के राग और द्वेष से बचे, क्योंकि इन दोनों से,
शुरू होती है हमारे पतन की कहानी ||

किसी भी हालत में स्वधर्म का दामन न छोड़ो,
भले ही पराया धर्म बहुत ही लुभाता है |
अब अर्जुन का है सवाल, कि जान-बुझ कर भी मनुष्य से,
भला पाप कैसे हो जाता है? ||

ईश्वर ने कहा कि काम और क्रोध, ये ही दो है,
जो हैं सबसे बड़े पापी और दुश्मन |
जैसे धुआँ आग को ढांक लेता है,
वैसे ही काम से ज्ञान पर पड़ जाती है चिलमन ||

इन्द्रियों, मन और बुद्धि में रहकर, काम का ध्येय है कि,
इन्ही के सहारे हमें पूरी तरह से मोहित किया जाए |
उपाय यही है, कि इन्द्रियों को वश में कर, इस,
ज्ञान-विज्ञान नाशी काम को ही जड़ से ख़त्म कर दिया जाए ||

क्योंकि शरीर से परे इन्द्रियां, इन्द्रियों से परे मन,
मन से परे बुद्धि और बुद्धि से परे आत्मा का स्थान है |
सर्व-शक्तिमान आत्मा से बुद्धि और बुद्धि से मन को,
वश कर, इस कामरूपी शत्रु को मारने में ही कल्याण है ||

आओ अपने मन से मिटा दें,
यह राग, यह द्वेष, यह बुरा और यह अच्छा |
अगर जो माँगा, वो मिल गया तो “हरि कृपा”,
और नहीं मिला तो “हरि इच्छा" ||

अध्याय ४ - ज्ञान-कर्म सन्यास योग

आज यूँ लगता है कि यह जीवन,
अज्ञान के अंधेरे में है बीता |
जीवन-ज्ञान और विज्ञान की,
सच्ची सीख है भगवद् गीता ||

चौथे अध्याय में प्रभु बुनते हैं ज्ञानयोग,
कर्मयोग और सन्यास का धागा |
इस आवन-जावन से मनुष्य हो सकता है मुक्त,
पापी हो या अभागा ||

प्रभु से सूर्य को दी हुई ये योग की शिक्षा,
हर अगली पीढ़ी को गयी है |
पर काफी पीढ़ियों के बाद, कई काल से ये विद्या,
इस पृथ्वी से खो गयी है ||

प्रभु जो उसके सामने हैं, वह सदियों पहले थे,
ये बात अर्जुन का दिल न माने |
प्रभु का जवाब यह है, कि बहुतेरे जन्म हैं,
मेरे और तुम्हारे, यह मैं जानू, तू न जाने ||

अविनाशी, अजन्मे और परमेश्वर हो कर भी,
प्रभु अपनी ही योगमाया से प्रकट होते हैं |
हर युग में अपना अवतार रचते हैं,
जब अधर्म में वृद्धि और धर्म पर संकट होते हैं ||

धर्म और सुकर्मियों के उद्धार एवं दुष्कर्मियों के,
नाश के लिए, प्रभु का आना ज़रूरी है |
जो इस को पूरी तरह से जान ले, उसके लिए,
मृत्यु के बाद वापस जाने की न मजबूरी है ||

इस राह पर, राग, भय, क्रोध को त्याग कर,
कई भक्ति-विभोर जन, प्रभु को पा चुके हैं |
जैसी कर्म-पूजा, वैसा मिले प्रसाद, यह राज़ जान कर,
बुद्धिमान सीधी राह पर आ चुके हैं ||

कुछ अज्ञानी, फल की कामना युक्त, देवताओं को पूजे,
उन्हें फल भी जल्द ही मिलता है |
गुण-कर्म के आधार पर बंटे ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य,
शूद्र के कर्मों के पीछे भी, वही एक अकर्ता है ||

आसक्ति-रहित कर्म तो बांधते नहीं, इसी बात पर है ईश्वर,
और तत्त्व-ज्ञानी में समानता |
पर कर्म क्या है और अकर्म किसे कहते हैं,
यह तो कभी-कभी बुद्धिमान भी नहीं जानता ||

आसान नहीं हैं, पर ज़रूरी है जानना कर्म,
अकर्म और निषिद्ध कर्म का राज़ |
देखना कर्म में अकर्म और अकर्म में कर्म,
वो ही है बुद्धिमान योगी का अंदाज़ ||

जो सच्चे ज्ञान से, कामना-रहित होकर करे हर कर्म,
उसे तो ज्ञानी भी दे पंडित का नाम |
जो सिर्फ रखे भगवान् पर आश्रय और करे कर्तव्य-कर्म,
जिसका अहम् से ना कोई काम ||

मन और शरीर पर करे काबू और भोगो का करे त्याग,
ऐसे आशारहित को न लगे कर्मों का पाप |
जो मिला उस में संतुष्ट, हर्ष-शोक, सिद्धि-असिद्धि,
में समता, और ईर्ष्या का जिससे न हो मिलाप ||

आसक्ति-रहित, ज्ञानी चित्त से भरपूर, यज्ञ करते हुए,
उस मुक्त पुरुष के लिए कर्म हो जाते हैं समाप्त |
और यह यज्ञ ऐसा जिसमे आहुति, हवन-साधन, पवित्र अग्नि,
और प्रसाद सभी वह ब्रम्ह ही हैं, यथार्थ ||

कुछ योगी देवताओं की पूजा करके, और कुछ योगी,
ब्रम्हरूपी अग्नि में यज्ञ से ही यज्ञ को अर्पण करते हैं |
कुछ योगी सुनने पर करके काबू, तो कुछ योगी,
कहने पर करके काबू, इस तरह से यज्ञ-समर्पण करते हैं ||

और कुछ ऐसे जो सारी इन्द्रियों और प्राणशक्ति की,
क्रियाओं का आत्म-संयम योग से हवन करते हैं |
कुछ व्रत से, कुछ तप से, कुछ अष्टांग योग से,
कुछ प्राणायाम से, और कुछ स्वाध्याय से पठन करते हैं ||

कुछ श्वाश का तप करके, उसे अंदर-बाहर करने,
की विधि से, प्राणायाम से श्वास रोककर हवन करते हैं |
और कुछ और आहार को प्रतिबंधित कर के यज्ञ करते,
यह सब यज्ञ, ज्ञानियों के पाप का पतन करते हैं ||

जो भोगे यज्ञ का प्रसाद, वो पाए उस ब्रम्ह को,
और जो न करे यज्ञ, वो तो किसी लोक में जगह नहीं पाता |
उस ब्रम्ह को ही अर्पण है यह सारे यज्ञ, जो होते हैं,
कर्म से उत्पन्न, और इस ज्ञान से वह मुक्त है हो जाता ||

पर यज्ञो में भी श्रेष्ठ हैं ज्ञान यज्ञ, क्योंकि हर एक कर्म,
अंत में जाकर ज्ञान पर ही समाप्त हो जाता है |
गुरु वंदना और सेवा से, सच्चे प्रश्नों से,
सत्य-दर्शी ज्ञानियों के उपदेश से, यह ज्ञान प्राप्त हो जाता है ||

इस ज्ञान के पाने से मोह को होगा पूर्ण-विनाश,
और कण-कण में दिखेगी उस परब्रम्ह की अद्भुत पहचान |
ज्ञान में यह शक्ति है, कि महा-पापी के लिए भी,
ज्ञान-रूपी नाव से पाप-रूपी सागर पार करना है आसान ||

जैसे आग में जलकर सारे ईंधन भस्म हो जाए, ऐसे ही,
ज्ञान की अग्नि से हमारे सम्पूर्ण कर्म भस्म हो जाते हैं |
ज्ञान से पुनीत कुछ नहीं, और ज्ञान से सिद्ध पुरुष,
समय आने पर इस पवित्र ज्ञान को अपने भीतर पाते हैं ||

जिस श्रद्धा-युक्त का हो मन-इद्रियों पर काबू,
और चित्त हो स्थिर, वह है ज्ञानी और उसे मिले परम शांति |
जो हो अश्रद्धा से युक्त, और संशय से भरपूर,
वो किसी लोक में सुख न पाए, और उन्हें मिले केवल अशांति ||

जो कर्मयोग से करे कर्मों का त्याग, और ज्ञान-योग,
से काटे संशय, वह हैं आत्म-ज्ञानी और उसे न बांधे कर्म |
इसलिए अज्ञान से उत्पन संशय को ज्ञानयोग-रूपी,
तलवार से काट कर, अपना युद्ध कर, ये ही है तेरा धर्म ||

आओ अपने मन से मिटा दें,
यह राग, यह द्वेष, यह बुरा और यह अच्छा |
अगर जो माँगा, वो मिल गया तो “हरि कृपा”,
और नहीं मिला तो “हरि इच्छा" ||

अध्याय ५ - कर्म-सन्यास योग

आज यूँ लगता है कि यह जीवन,
अज्ञान के अंधेरे में है बीता |
जीवन-ज्ञान और विज्ञान की,
सच्ची सीख है भगवद् गीता ||

क्या कर्म त्यागना है संन्यास, या सच्चे संन्यास,
के लिए त्यागना पड़े अभिमान? |
इस अध्याय में श्री कृष्ण देते हैं सच्चे सन्यास,
की परिभाषा और उसका पूरा ज्ञान ||

अर्जुन ने पूछा यह सवाल, कि सन्यास या कर्म-योग,
किस मार्ग पर चलना है बेहतर |
यूँ तो दोनों ही मोक्ष मार्ग हैं, पर सन्यास के मुकाबले,
कर्म-योग है श्रेष्ठ, यह है प्रभु का उत्तर ||

जो द्वेष न करे और न करे कामना,
उसे तो कर्म करते हुए भी सन्यासी जान |
द्वंदों से परे, उस के लिए कर्म-बन्धनों,
से मुक्त होना है सुखपूर्वक और आसान ||

सांख्य और योग को एक समझने वाला ज्ञानी,
किसी एक का सहारा लेकर मुक्त हो जाता है |
जो देखे ज्ञान योग और कर्म-योग में एकता,
वही योगी उस ब्रम्ह के परम ज्ञान से युक्त हो जाता है ||

ब्रम्ह-द्वार में प्रवेश के लिए, संन्यास-रूपी ताले में,
कर्म-योग की चाबी का प्रवेश जरूरी और उपयोगी है |
जो शुद्ध चित से, मन और इन्द्रियों पर काबू पा कर,
सब में उस ईश्वर को देखे, वही सच्चा कर्म-योगी है ||

ईश्वर-युक्त योगी, हर कार्य करते हुए जानता है,
कि यह तो प्रकृति का है खेल, "मैं कर्म कर नहीं सकता"।
जैसे कमल-पत्र पर पानी नहीं टिकता, वैसे ही,
आसक्ति रहित कर्म-योगी को कोई कर्म बाँध नहीं सकता ।

आसक्ति का त्याग कर, शरीर, मन या इन्द्रियों द्वारा,
कर्मयोगी के कर्मो का उद्देश्य तो हैं केवल आत्मशुद्धि ।
ब्रम्ह से युक्त योगी को मिले आनंदमई सुबुद्धि,
और सकामी, ब्रम्ह से दूर कर्मी को मिले बंधित दुर्बुद्धि ॥

प्रकृति को वश में करे, मन से कर्मो का संन्यास करे,
वह योगी होता है अपने नौ-द्वार शरीर का सुखी स्वामी ।
न तो कर्मों, कर्तापन या कर्म-फलों का है ईश्वर सृष्टा,
यह तो प्रकृति की है रचना - भूत, वर्तमान या आगामी ॥

सर्वव्यापी ईश्वर का ना पुण्य, पाप से वास्ता,
अज्ञान की चादर प्राणियों को मोहित और भ्रष्ट कर देती हैं |
जिन्हें आत्म ज्ञान का सूर्य मिल जाता है, उसकी,
रौशनी अंदर के अज्ञान रूपी अंधकार को नष्ट कर देती है ||

जो परब्रम्ह को ही ध्येय मानकर, ज्ञान के पथ पर चले,
वह फिर उस ईश्वर के धाम से वापस नहीं आते |
ऐसे ज्ञानी, विद्या और विनय से युक्त, ब्राम्हण,
गाय, हाथी, कुत्ते और चांडाल में कोई अंतर नहीं पाते ||

ऐसे समत्व-मन वाले इसी जीवन में सृष्टि-पति हो जाते हैं,
क्योंकि जो सम हैं, वह ब्रम्ह में निवास करता है |
प्रिय वस्तु से हर्षित और अप्रिय वस्तु से दुखी न हो,
वह स्थिर-बुद्धि मोह-रहित योगी, ब्रम्ह में वास करता है ||

बाहरी वस्तुओं को छोड़ कर, जो आत्म-सुख में डूबे,
उसी ब्रम्ह-युक्त को मिलता है कभी न खोने वाला सुख |
ज्ञानी वह, जो यह जाने कि आदि और अंत वाले,
बाहरी सुख भोग तो हैं क्षण-भंगुर और लाये केवल दुःख ||

जो मनुष्य जीवन जीते हुए ही, काम और क्रोध के,
वार सह जाए, वह है योगी और सुख का हक़दार |
आत्मिक सुख, शांति और प्रकाश को पाने वाला योगी,
ब्रम्ह हो जाता है, उसका हो जाता है बेडा पार ||

जिनके पाप धूल गए, जिनके संशय मिट गए,
जो आत्म-संयम से करे सबका भला, वे अवश्य ब्रम्ह को पाए |
जो काम क्रोध से मुक्त हो, जिनका चित पर हो काबू,
ऐसे ऋषि और ज्ञानी हर तरह से उस ब्रम्ह के हो जाए ||

बाहरी वस्तुओं से परे, दृष्टि को स्थिर करके, जो योगी,
अपने स्वाश को सम करके, ध्यान में खो जाता हैं |
इन्द्रियों, मन और बुद्धि पर काबू पा कर, कामना, भय,
और क्रोध से मुक्त, वह मुनि मोक्ष को पाता है ||

ईश्वर ही हैं यज्ञ, तपस्याओं का भोक्ता, सब लोकों,
का स्वामी, एवं सब लोगो का हितकारी |
जिसने यह सच जान लिया और मान लिया,
वही है आनंद और शांति का सही अधिकारी ||

आओ अपने मन से मिटा दें,
यह राग, यह द्वेष, यह बुरा और यह अच्छा |
अगर जो माँगा, वो मिल गया तो “हरि कृपा”,
और नहीं मिला तो “हरि इच्छा" ||

अध्याय ६ - ध्यान योग

आज यूँ लगता है कि यह जीवन,
अज्ञान के अंधेरे में है बीता |
जीवन-ज्ञान और विज्ञान की,
सच्ची सीख है भगवद् गीता ||

किसी भी चीज़ को पाने के लिए लगता है,
कठोर परिश्रम और सख्त अनुशाशन |
इस अध्याय में भगवान् देते हैं अर्जुन को,
ध्यान लगाने की सही रीत और साधन ||

जो कर्मफल से निरासक्त हो कर कर्म करे,
वह है सच्चा सन्यासी और सच्चा योगी |
सन्यास ही है योग का तत्त्व और जिसने मन से,
कामना को न त्यागा, वह तो हैं भोगी ||

निष्काम कर्म हैं उस योगी का आधार जो,
योग के शिखर पर चढ़ रहा है |
शांति और ध्यान हैं उस सम्पूर्ण योगी के पास,
जो प्रभु की ओर बढ़ रहा है ||

निष्काम कर्मो में लीन, इन्द्रियों को वश में रख,
कामना को त्याग दें, ये है सम्पूर्ण योगी का चरित्र |
आत्मा से ही आत्मा को उठाकर, वह समझ लेता है,
कि आत्मा ही है शत्रु और आत्मा ही है मित्र ||

अगर उच्च आत्मा ने निचली आत्मा को जीता,
तो वह विजयी आत्मा मित्र के समान है |
लेकिन अगर निचली आत्मा ने जीत पा ली,
तो वह उसके लिए शत्रुता का एलान है ||

आत्मा को जीत कर, आत्म-संयम पा कर,
वह योगी, द्वन्द्वो से परे, उच्च आत्मा से तृप्त हो जाता है |
आत्मज्ञान से भरपूर, इन्द्रियों का वशी, निश्छल,
निराकार और समभावी, वह योगी युक्त हो जाता है ||

जो दोस्त, दुश्मन, सुकर्मी और दुष्कर्मी में कोई,
भेद नहीं करता, वही वास्तव में श्रेष्ट कहलाता है |
ऐसा योगी तो अपनी आत्मा से जुड़ कर,
सभी बंधनो से मुक्त, आत्म-संयम से एकांत को अपनाता है ||

एक पवित्र स्थान पर, आसन लगा कर,
एकाग्र चित और संयम से, वह योगी ध्यान लगाता है |
शरीर सीधा कर, स्थिर दृष्टि से, अभय हो कर,
वह ब्रम्हचारी शांत मन से प्रभु में लीन हो जाता है ||

यह दुःख का नाश करने वाला वह योग है,
जिसमें संतुलित और उपयुक्त आहार एवं निद्रा ज़रूरी हैं |
जब चित्त पर काबू, कामनाओं से आज़ादी और,
आत्म-स्थिरता आ जाये, तभी उसकी युक्तता पूरी है ||

उस योगी का असंलग्न चित्त उतना ही स्थिर होता है,
जैसे बिना पवन के कक्ष में दिये की लौ जलती है |
जिसमे शुद्ध आत्म-दर्शन हो जाए, चित्त शांत,
और निश्छल हो जाये और बाहरी कामनाएं नहीं खलती हैं ||

इस आध्यत्म-आनंद के आगे सब सुख फीके लगे,
और जिसे पाकर, उस योगी को न हिला पाए दुखों का वार |
मन से दुःख का नाता तोड़, आनंद की प्राप्ति ही,
योग कहलाये, इस को हर हाल में पा कर, करनी है नैया पार ||

सम्पूर्ण कामनाओं को त्याग कर, इन्द्रियों को वश में कर,
बुद्धि का सारा ध्यान ईश्वर पर लगाना हैं |
आसान नहीं, पर जब-जब चंचल मन भटके, तब-तब,
उसे वश में कर, आत्म-स्थिर हो कर, राह पर लाना है ||

सम्पूर्ण शांति से युक्त, रजस से मुक्त, इस योगी की,
आत्मा ब्रम्ह-भाव से पूर्ण, उच्चतम सुख को पाती है |
काम क्रोध को त्याग कर, उस योगी की आत्मा,
ब्रम्ह-स्पर्श से युक्त हो कर, परमानन्द को पा जाती है ||

योग-युक्त आत्मा वाला योगी, उसी आत्मा को सब में,
और सब में उस आत्मा को देख कर खुश होता है |
जो सब में भगवान् को, और भगवान् को सब में देखे,
वह रहे भगवान के मन में और न वह प्रभु को खोता है ||

जो सब को भगवान् का रूप जानकर प्रेम करे,
उसका कर्म तो प्रभु का ही कर्म जाना जाता है |
जो सुख में और दुःख में, सब को समभाव से अपना माने,
उसे उच्चतम योगी माना जाता है ||

यहाँ यह प्रश्न उठता है, कि क्या समत्व-भाव वाला यह योग,
हम चंचल मन वालो के लिए मुमकिन है? |
क्योंकि मन तो चंचल, बलवान और हठीला है,
और उस पर काबू पाना तो वायु को रोकने से भी कठिन है ||

उत्तर यह है, कि निश्चय ही मन चंचल और हठीला है,
पर अभ्यास और वैराग्य ही उसे वश करने के हल हैं |
जिसने आत्मा को वश न किया, उसके लिए कठिन,
और आत्मा को वश करने वाले के लिए यह सरल है ||

एक प्रश्न और, कि इस राह पर चला हुआ योगी,
सिद्धि पाने से पहले मर जाए, उसकी क्या गति होती है? |
क्या उस मोह-ग्रस्त, अस्थिर और हारे हुए योगी की हालत,
एक छिन्न-भिन्न बादल की सी स्तिथि होती है? ||

भगवान् का है आश्वासन कि ऐसे कल्याणकारी कर्मयोगी,
का विनाश तो न इस लोक में न परलोक में होता है |
ऐसा योगी, पुण्य लोको में संतुष्टि से निवास कर,
फिर से पवित्र और धनवान कुल में जन्म का भागी होता है ||

या तो वो बुद्धिमान योगियों के कुल में जन्म लेता है,
यद्यपि ऐसा जन्म इस लोक में मुश्किल से मिलता है |
इस नए जन्म को पा के, वह पिछले जन्म की जमा पूँजी से,
फिर ब्रम्ह-सिद्धि के राह पे निकलता है ||

उस पिछले जन्म की पूँजी के बल से, वेद और उपनिषद्,
से भी आगे, वह एक नए ज्ञान को पाता है |
परिश्रम और अभ्यास से, पाप-मुक्त हो कर,
अनेक जन्मों के बाद, वह मोक्ष-रूप परम गति को पाता है ||

भगवान का यह स्पष्ट मत है कि योगी तो तपस्वियों,
ज्ञानियों और कर्म-कर्ताओं से भी श्रेष्ठ होता है |
और सब योगियों में, जो सम्पूर्ण समर्पण और श्रद्धा से,
ईश्वर को पूजे, वह ईश्वर के सबसे पास होता है ||

आओ अपने मन से मिटा दें,
यह राग, यह द्वेष, यह बुरा और यह अच्छा |
अगर जो माँगा, वो मिल गया तो “हरि कृपा” ,
और नहीं मिला तो “हरि इच्छा" ||

अध्याय ७ - ज्ञान विज्ञान योग

आज यूँ लगता है कि यह जीवन,
अज्ञान के अंधेरे में है बीता |
जीवन-ज्ञान और विज्ञान की,
सच्ची सीख है भगवद् गीता ||

सातवें अध्याय में दिया,
भगवान ने अर्जुन को वो ज्ञान |
जो इसे समझ ले,
वो बन जाए ज्ञानी और धनवान ||

पर इस ज्ञान को पाना आसान नहीं,
और कुछ को ही मिलती ये "हरि" डगर |
मुश्किले लाख मिलेंगी, पर अपनी,
उत्कंठ अभिलाषा पर कर निर्भर ||

यह समझ कि भगवान ने ही रची है,
यह आठ भागों वाली जड़ प्रकृति |
पर इससे परे है उनकी वो अनदेखी,
और जीवदेई चेतन प्रकृति ||

इस जड़ और चेतन प्रकृति का मिलाप है,
हर एक जीव का उदय और पतन |
उन्होने ही पिरोया हुआ है,
अपनी दिव्य माला में हर एक प्राणी रूप रतन ||

भगवान बसे हैं इस जगत की हर,
सुंदर और आलोकिक वस्तु में, क्या सूरज और क्या वेद |
गुण से उत्पन भावों में भी वो ही हैं,
एक होते हुए भी हम भिन्न हैं, क्या समझे यह गहरा भेद? ||

माया वो, जो होती नहीं पर दिखती है कि है,
इस दिव्य माया में फंसे हम अंधे हो गये |
पर जो नित्य भजन और स्मरण कर गये,
वो इस माया से परे हो गये ||

जो भगवान को कभी नहीं भजते,
वो होते हैं मूर्ख और अज्ञानी |
और जो सच्चे भक्त होते हैं,
वो हो सकते है अर्थारती, आर्त्त, जिग्यासु या ज्ञानी ||

ज्ञानी का है स्थान,
भगवान के मंन में विशेष |
ज्ञानी तो लीन हो चुका हैं भगवान में,
अपने में नहीं कुछ शेष ||

और कुछ लोग ऐसे हैं जो कुछ देवियों,
और देवताओं को पूजते हैं |
मंज़िल तो भगवान ही हैं,
पर उसे इस देव या देवी में ढूँढते हैं ||

अगर सच्चे मन से पूजोगे,
तो मनचाहा फल मिलेगा तो ज़रूर |
पर कुछ पल की ही खुशियाँ देगा,
क्योंकि वो होगा क्षण-भंगूर ||

जो नश्वर फलों की कामना करेंगे,
वो जाएँगे उन फलों के देवों के पास |
जो अनश्वर सत-चित-आनंद को भजता है,
वो जाता है उस अविनाशी ईश्वर के पास ||

यह समझ ले, के जो चेतन है,
वो कभी जड़ हो नहीं सकती |
पर यह बात अज्ञानियो की,
समझ में कभी आ नहीं सकती ||

उस ईश्वर को भूत, वर्तमान,
और भविष्य सब नज़र आता है |
पर श्रद्दा रहित मनुष्य,
यह राज़ जान नहीं पाता है ||

ईश्वर को देखने के लिए अपनी आखों की नहीं,
ज्ञान-चक्षु की ज़रूरत है |
निष्काम भाव, राग द्वेष से मुक्ति और दृढ़ निश्चय हो,
तभी दिखे उनकी मूरत है |

इस पाठ पर जो आचरण करे,
पूरा ज्ञान विज्ञान उन्ही लोगो को मिलता हैं |
यह आवन-जावन के चक्करों से,
निवारण भी उन्हीं लोगों को मिलता है ||

आओ अपने मन से मिटा दें,
यह राग, यह द्वेष, यह बुरा और यह अच्छा |
अगर जो माँगा, वो मिल गया तो “हरि कृपा”,
और नहीं मिला तो “हरि इच्छा" ||

अध्याय ८ - अक्षरब्रह: योग

आज यूँ लगता है कि यह जीवन,
अज्ञान के अंधेरे में है बीता |
जीवन-ज्ञान और विज्ञान की,
सच्ची सीख है भगवद् गीता ||

आठवें अध्याय में मिलता है,
उस पुरषोत्तम अक्षर ब्रम्ह का परिचय |
साथ ही मिट जाता है उन तक,
पहुँचने के मार्ग का रहा सहा संशय ||

ब्रम्ह वो, जो कभी नष्ट नहीं होता,
और मनुष्य का स्वाभाव ही आध्यात्म कहलाता है |
जिससे होती है पूरे जग - स्थूल और सूक्ष्म की रचना,
वो ही कर्म कहलाता है ||

अधिभूत, सिर्फ़ एक षणभंगूर अवस्था है,
और अधिदैव, यह पुरुष अर्थात यह आत्मा ही है |
आधियज्ञ तो हमारे अंदर बसे वो यज्ञ के देवता,
परम पिता परमात्मा ही हैं ||

जो निष्काम भाव से परमात्मा को ध्याएगा,
वो मरने पर उस परमात्मा को ही पाएगा |
यही नहीं, जो अंत समय में जिस वस्तु को चाहेगा,
वो उसी वस्तु के पास खुद को पाएगा ||

अंत समय में जो योगी, शांत मन और प्रभु भक्ति से,
दो भवों के बीच ध्यान लगाए |
वो उस पुरषोत्तम को, जो सूक्ष्म से भी सूक्ष्म है,
और जो अकल्पनिय है, पाए ||

जो योगी इंद्रियों को वश कर, मन को हृदय में बसा कर,
ॐ का जाप करे, वो परम गति को पाता है |
जो नित्य और प्रति पल उस परम ईश्वर को याद करता है,
उसका पथ, वास्तव में सरल हो जाता है ||

संसार के हर लोक में यह जीवन-मृत्यु का
सिलसिला चलता ही जाता है |
पर जो उस इश्वर और परमात्मा को पाता है,
वो फिर लौट कर नहीं आता है ||

ब्रम्हदेव के दिन के हज़ार युगों में,
अप्रकट प्राणी प्रकट हो जाते हैं |
और उन्हीं की रात के हज़ार युगों में,
वो ही प्राणी फिर से अप्रकट हो जाते हैं ||

पर इस दिन रात से परे, इस अप्रकट से भी परे,
एक और परम शक्ति है |
जो अचल है, अनश्वर है,
उसे पाने का मार्ग सिर्फ़ अनन्य भक्ति है ||

जो योगी उजाले की ओर खुद को उपर उठाता है,
वो फिर लौट कर वापस नहीं आता है |
और जो अंधेरे की तरफ, नीचे की राह पकड़ता है,
वो इस संसार में फिर लौट आता है ||

यह सत्य जान कर, उसकी सोच और मन साफ हो जाता है,
क्योंकि वो योग-युक्त हो जाता है |
वो योगी सब वस्तुओ से उपर उठकर,
उस परमात्मा को पाने के लिए उपयुक्त हो जाता है ||

प्रति पल कृष्ण रहे जब मन में,
मन और बुद्धि रहे उनके चरण में,
नही बाधा फिर प्रभु-मिलन में |
सिर्फ़ गिरिधर का आभास,
स्थिर चेतना और निरंतर अभ्यास,
तभी हरि प्राप्ति होगी, यह रखो विश्वास ||

आओ अपने मन से मिटा दें,
यह राग, यह द्वेष, यह बुरा और यह अच्छा |
अगर जो माँगा, वो मिल गया तो “हरि कृपा” ,
और नहीं मिला तो “हरि इच्छा" ||

अध्याय ९ - राज-विद्या राज-गुह्य योग

आज यूँ लगता है कि यह जीवन,
अज्ञान के अंधेरे में है बीता |
जीवन-ज्ञान और विज्ञान की,
सच्ची सीख है भगवद् गीता ||

इस अध्याय में भगवन,
उस रहस्य का करते हैं खुलासा |
जिसे जानकर और किसी ज्ञान,
की नहीं रहेगी अभिलाषा ||

इस ज्ञान को पाने के लिए,
भक्ति की ज़रुरत है |
अश्रद्धा रखने वालो को नहीं,
मिलती यह दौलत है ||

ईश्वर तो मेरे तुम्हारे से भी,
परे - असीमित, अकल्पनीय है |
न हम उनमे, न वो हम में,
यह बात गोपनीय है ||

इस प्रकृति और हर एक प्राणी,
का कर्ता-धर्ता वो एक ही तो है |
पर इस माया और मोह से परे,
गुणातीत वो एक ही तो हैं ||

आसुरी और दानवी वृत्ति वाले मूढ़ लोग,
उस अवतार को कहाँ जान पाते हैं |
मोघ आशा, मोघ कर्म और मोघ ज्ञान में,
जो अपना जीवन बिताते हैं ||

कुछ महात्माजन तो हैं, जो हर पल,
भगवत-भक्ति में लीन रहते हैं |
और दूसरे, ज्ञान के मार्ग से,
बहुमुखी ईश्वर से 'एक' अद्वैत तक पहुँचते हैं ||

यज्ञ के हर अंश में, माता-पिता में,
ॐ में, वेदो में, वो ईश्वर ही तो हैं |
हम सब का स्वामी, कर्ता-धर्ता,
सबका साथी, वह बीज अनश्वर ही तो हैं ||

सूरज की गर्मी और वर्षा का कारण,
वो ही एक परमात्मा है |
अमर वो ही, मृत्यु वो ही,
सत और असत से परे वह आत्मा है ||

वेदों का पालन करते, सुकर्म और तप से,
वासना प्रेमी स्वर्ग पहुँच तो जाते हैं |
पर सुकर्मो की समाप्ति पर,
अपनी शेष वासनाओं के पीछे, वापस धरती पर आ जाते हैं ||

अपने भक्तों को यह आश्वासन,
भगवान् साफ़-साफ़ देते हैं |
उनको निरंतर भेजने वालो का जीवन,
ईश्वर खुद ही संभाल लेते हैं ||

सब देवी-देवताओं में उस एक,
सर्वोच्च ईश्वर का ही वास है |
पर हम उन्हें पूजते हैं,
क्योंकि उस परम-तत्त्व का हमको नहीं आभास है ||

जो हम चाहेंगे, वो हम पाएँगे,
भगवदकृपा के दम पर |
भगवद् भाव से उन्हें पूजे,
यह भावना आ जाए हम पर ||

कर्म वो ही करने हैं,
सिर्फ भाव में बदलाव लाना है |
उन्हें ही सब अर्पण करना है,
तो अहं क्यों दिखाना है? ||

भगवान की नज़र में कोई दूर,
कोई पास नही होता |
पापी भी बन सकता हैं पंडित,
फिर वो राह नही खोता ||

रहस्य यह है, कि आत्म-योगी,
परम-शांति और संतुलन के साथ |
अपने हर एक कर्म का फल
कर देता है उस परमात्मा के हाथ ||

जो योगी, दृढ़-निश्चय और भक्ति-भाव के साथ,
हो जाता हैं इस कार्य में समर्थ |
उस परमात्मा में लीन हो कर,
बाकी सब चीज़े उसके लिए हो जाती हैं व्यर्थ ||

आओ अपने मन से मिटा दें,
यह राग, यह द्वेष, यह बुरा और यह अच्छा |
अगर जो माँगा, वो मिल गया तो “हरि कृपा”,
और नहीं मिला तो “हरि इच्छा" ||

अध्याय १० - विभूति योग

आज यूँ लगता है कि यह जीवन,
अज्ञान के अंधेरे में है बीता |
जीवन-ज्ञान और विज्ञान की,
सच्ची सीख है भगवद् गीता ||

इस अध्याय में भगवान करते हैं,
अपनी विभूतियों का वर्णन |
वो ही है देवों, ऋषियों और,
समस्त जगत के आदि-कारण ||

हर एक प्राणी का हर एक भाव,
उस ईश्वर से ही होता है उत्प्पन |
इस सृष्टि के रचयता है वो,
और उन्ही की संतान है हर एक जीवन ||

साथ में यह आश्वासन भी देते हैं,
हमें हमारे भगवन् |
जो योगी उनके योग में युक्त हो जाए,
सफल हो जाए उसका जीवन ||

जो यह राज़ जान जाता है, कि ईश्वर ही है,
हर एक वस्तु का आदि, मध्य और अंत |
उस भक्त के लिए हर दिन दीवाली
और हर एक ऋतु हो जाती है वसंत ||

जो भक्त एक दूसरे में लीन हो कर,
ईश्वर की भक्ति का करते है वर्णन |
ईश्वर की कृपा से हो जाता है,
ज्योतिर्मय और बुद्धि-योग्मय, उनका जीवन ||

ईश्वर हैं परम ब्रह्म्, परम धाम और परम पवित्र,
इस में नहीं है संशय |
वो समस्त भूतों और देवो के स्वामी ही दे सकते हैं
अपना पूर्ण परिचय ||

आख़िर किन-किन भावों और रूपों में,
हम कर सकते है उस परम ईश्वर की अनुभूति? |
ईश्वर तो हर कण कण में बसे है,
पर किन-किन वस्तुओं में है उनकी साकार विभूति? ||

यह फिर जान लो, कि भगवान ही हैं,
हर वस्तु का अंत, मध्य और मूल कारण |
उनका विश्वरूप है अकल्पनीय,
पर वो खुद करते हैं अपनी पिछत्तर (75) विभूतियों का वर्णन ||

विष्णु, सूर्य, चंद्रमा, मरीचि, सामवेद,
इंद्र, मन और चेतना में उनका ही रूप है |
यक्ष, कुबेर, अग्नि, मेरु पर्वत,
ब्रहस्पति, स्कंद, सागर उनके ही स्वरूप है ||

महर्षि भृगु, ओंकार, जप-यज्ञ,
हिमालय, पीपल वृक्ष में उस ईश्वर का वास है |
चित्ररथ, नारद और कपिल मुनि,
उच्चैस्रवा अश्व, एरावत हाथी में ईश्वर का स्वाश है ||

राजा में, दिव्य वज्र, कामधेनु, कामदेव,
वासुकि और अनंत नाग में वो विभूषित हैं |
वरुण, आर्यमा, यमदेव, प्रहलाद,
समय, सिंह, गरुड़, वायु, उन्ही से सुशोभित हैं ||

भगवन राम, मगर, गंगा, अध्यात्म-विद्या, तर्क, प्रथम अक्षर अ,
द्वंद समास, काल और विश्वतोमुख्म वो ईश्वर हैं |
मृत्यु, उत्पत्ता, कीर्ति, सुंदरता, वाणी, स्मरण-शक्ति, बुद्धि,
धीरता, क्षमा, ब्रह्त्साम और गायत्री मंत्र में वो अनश्वर हैं ||

मार्गसीर्श महीने, वसंत ऋतु, जुए में, बलवानो के बल,
विजय, दृढ़-निश्चय, और सत्व-गुण में उनकी झलक है |
वासुदेव, अर्जुन, वेद व्यास, कवि शुक्राचार्य, दमनकर्ता के दंड में,
नीति में, मौन और ज्ञान की अग्नि में उनकी भड़क है ||

प्रभु की विभूतियों की नहीं कोई सीमा,
और हर एक वस्तु का बीज, परमात्मा वो ही है |
हर सुंदर, बलवान और अद्भुत वस्तु में रहने वाली,
ज्योति, शक्ति और आत्मा, वो ही है ||

आओ अपने मन से मिटा दें,
यह राग, यह द्वेष, यह बुरा और यह अच्छा |
अगर जो माँगा, वो मिल गया तो “हरि कृपा”,
और नहीं मिला तो “हरि इच्छा" ||

अध्याय ११ - विश्व रूप दर्शन योग

आज यूँ लगता है कि यह जीवन,
अज्ञान के अंधेरे में है बीता |
जीवन-ज्ञान और विज्ञान की,
सच्ची सीख है भगवद् गीता ||

अब तक भगवान अर्जुन को समझाते हैं,
दे कर गवाही और करके अनुमान |
इस अध्याय में अपना विराट विश्व-रूप दिखाकर,
वो देते हैं प्रत्यक्ष प्रमाण ||

अध्यातम का ज्ञान पा कर, दूर हो गया है,
अर्जुन के मन का मोह |
पर अब भी भगवान का विराट रूप,
स्वयं देखने को इच्छुक है वो ||

अपनी कृपा से भगवान अपना विराट रूप,
प्रकट करने हो जाते हैं तैयार |
अर्जुन है भाग्यशाली, कि वो करता है,
उस दिव्य रूप का साक्षात्कार ||

इस रूप को देखते ही, वस्तुओं का अंतर,
और समय का आभास, दोनो मिट जाएँगे |
पर इस रूप को देखने के लिए चाहिए दिव्य नेत्र,
जो हम प्रभु की कृपा से ही पाएँगे ||

इस रूप मे महायोगेश्वर के हैं, सहस्त्र मुख,
नेत्र, आभूषण और शस्त्र |
उनमें है सहस्त्र सूर्यों का तेज और,
वो पहने है दिव्य मालाए, गंध और वस्त्र ||

उस पुरषोत्तम के शरीर में अर्जुन को हुआ,
इस संपूर्ण जगत का साक्षात्कार |
उसका रोम-रोम नाच उठा और सर झुका,
उसने किया उस ईश्वर को नमस्कार ||

उस शरीर में है ब्रह्मा जी, सब देव, ऋषि,
और अंतहीन उदर, नेत्र, मुँह और हाथ |
एक अद्भुत ज्योति, सब के परम धाम,
जगत के प्रभु हैं वह, विष्णु के रूप के साथ ||

इस छवि का नहीं कोई आदि, मध्य या अंत,
मुख से अग्नि और उचाई जैसे अंबर |
प्रभु के मुख की तरफ बढ़ रहे है स्तभ्द हो कर,
कुछ देव हर्ष से, कुछ डर कर ||

इस भयानक रूप को देख कर अर्जुन हो गया है,
भयभीत और भौच्चका |
उस जलते मुँह में जा रहे हैं सब धृतराष्ट्र पुत्र,
भीष्म, द्रोण, कर्ण और अन्य योद्धा ||

जैसे नदियाँ सागर में और पतंगे आग में,
अपने आत्म-विनाश की ओर जाते हैं |
मजबूर होकर, वे सब योद्धा,
उस प्रभु के जलते मुख और दांतो में चूर हो जाते हैं ||

इस विराट विष्णु के रूप को देख,
पूरा जगत कांप रहा है और धरती जल रही है |
अर्जुन प्रभु से प्रार्थना करते हैं,
कि आप के मन मे आख़िर क्या बात चल रही है? ||

अपनी शक्ति से सब को नष्ट करने वाले भगवान,
वो काल, वो समय हैं |
चाहे अर्जुन उन्हे मारे या ना मारे,
उन योद्धाओं का मरना तो पहले से तय है ||

भगवान यह बताते हैं की वो भीष्म, द्रोण,
कर्ण और जयद्रथ को पहले से ही मार चुके है |
अर्जुन तो सिर्फ़ निमित्त मात्र है,
और उसे तो उन्हें ही जीतना है जो पहले से ही हार चुके हैं ||

अर्जुन को हो गया है ज्ञान,
कि प्रभु ही हैं जिससे राक्षश डरते हैं और जिसे देव पूजते हैं |
वो ही हैं सब के परम धाम, पुरषोत्तम,
और विश्व व्यापी, जो सत्-असत से नहीं झूझते हैं ||

सब देवों में वो एक ही शक्ति,
चारो ओर उस ईश्वर का ही चमत्कार है |
उसी ईश्वर के चरणों में हमारा,
सेंकडो बार नमन और दंडवत नमस्कार है ||

वो कृष्ण जो सखा हैं, यादव हैं,
वो वास्तव में हैं ईश्वर और भगवान |
मित्र समझ कर जिसका अंजाने में,
अर्जुन ने किया होगा अपमान ||

वो जो चर-अचर के ईश्वर हैं और,
तीनो लोको में हैं अद्‌वितीय और अतुल्य |
उस प्रभु और सखा से अर्जुन माँगते हैं,
क्षमा-रूपी प्रसाद, जो है बहुमूल्य ||

इस छवि को देख भयभीत है अर्जुन,
भले ही अदभुत है यह रूप |
पर मन की शांति के लिए, अर्जुन चाहते हैं देखना,
प्रभु का विष्णु स्वरूप ||

और किसी साधक ने नहीं देखा है,
ईश्वर का यह विश्व-रूप |
अर्जुन पर कृपा कर,
प्रभु ने धारा वासुदेव का निर्मल स्वरूप ||

ना वेद, तप, दान और त्याग दिखा सकते यह रूप,
जिसे देखने को देव भी तरसते हैं |
वह ही उस ईश्वर को देख सकते हैं,
जो प्रभु की अनन्य भक्ति के मार्ग से गुज़रते हैं ||

जो हर कर्म ईश्वर के लिए करे,
और उन्ही की भक्ति में हृदय को लगाए |
जो संग मुक्त और द्वेष मुक्त हो,
वो उसी परम-परमेश्वर में लीन हो जाए ||

आओ अपने मन से मिटा दें,
यह राग, यह द्वेष, यह बुरा और यह अच्छा |
अगर जो माँगा, वो मिल गया तो “हरि कृपा”,
और नहीं मिला तो “हरि इच्छा" ||

अध्याय १२ - भक्ति योग

आज यूँ लगता है कि यह जीवन,
अज्ञान के अंधेरे में है बीता |
जीवन-ज्ञान और विज्ञान की,
सच्ची सीख है भगवद् गीता ||

प्रभु का रूप देख, उन्हे पूज कर,
उन्हें पहचानना है |
इस अध्याय को समझ कर,
भक्ति का सही अर्थ जानना है ||

भक्त वो जो अपने को ईश्वर से,
क्षण भर भी अलग न जाने |
भले वो उस ईश्वर को सगुण साकार,
या निरगुन निराकार माने ||

जो भक्त मन लगा के,
नित्य करता है श्रद्धा से पूजा |
ऐसे सगुण प्रभु की पूजा करने वाला,
नहीं भक्त दूजा ||

और जो अपनी इंद्रियों को वश कर,
उस निर्गुण ब्रम्ह का हो जाता है |
वो भी उस अक्षर, अव्यक्त, अचिंत्य,
और अचल ईश्वर को ही पाता है ||

इस बात को जान लें, कि जिसे हर पल,
इस देह का अभिमान है |
वो चाहे कर ले जितनी पूजा और तपस्या,
उसे मिलते नहीं भगवान हैं ||

सारे कर्म प्रभु के चरणो में रख, जो करता है,
उनका ध्यान बार-बार |
उसको प्रभु इस संसार से उबार लेते हैं,
कर देते है उसका उद्धार ||

भक्त बनने के देते हैं वो एक नहीं,
बहुत सारे विकल्प |
जिस राह पर भी चलो,
अवश्य होगा काया-कल्प ||

एक राह ईश्वर में मन,
और बुद्धि को लगाना है |
वो नहीं तो,
अभ्यासयोग से प्रभु को पाना है ||

वो भी कठिन, तो सारे कर्म,
उस प्रभु के लिए कर, उन्हे पाना है |
यदि ये भी नहीं संभव, तो उन्हे पाने के लिए,
कर्मो का फल त्याग कर जाना है ||

क्योंकि अभ्यास से बेहतर है ज्ञान,
और ज्ञान से बेहतर है प्रभु का ध्यान |
और सबसे बेहतर है त्याग,
क्योकि त्याग से ही मिले परम शांति का स्थान ||

वो भक्त है प्रभु को प्रिय, जो सबका हित चाहे,
दयालु हो और ना हो अभिमानी |
जो सम-भाव, आत्म-संयम और दृढ़ता से,
प्रभु को दे दे मन और बुद्धि की कुर्बानी ||

जिसमें जागे, ना वो जगाए उत्तेजना,
हर्ष, भय, इर्षा और चिंता |
जो नहीं बँधे, हो पावन,
और त्याग चुका हो कर्म-बंधक मंशा ||

जो हर तरह से सम भावी और,
शुभ-अशुभ की चिंता ना करे |
जो शत्रु, मित्र, मान, अपमान और,
हर एक उस द्वंद से हो परे ||

जो निंदा-स्तुति को समान समझे, संतुष्ट और,
आसक्ति-रहित हो, और सदा ईश्वर में मन लगाए |
पर जो प्रभु को समझे परम धाम और निष्काम भाव,
और श्रद्धा से करे सेवा, वो प्रभु से विशेष प्रेम पाए ||

आओ अपने मन से मिटा दें,
यह राग, यह द्वेष, यह बुरा और यह अच्छा |
अगर जो माँगा, वो मिल गया तो “हरि कृपा”,
और नहीं मिला तो “हरि इच्छा" ||

अध्याय १३ - क्षेत्र-क्षेत्रज्ञ योग

आज यूँ लगता है कि यह जीवन,
अज्ञान के अंधेरे में है बीता |
जीवन-ज्ञान और विज्ञान की,
सच्ची सीख है भगवद् गीता ||

क्या है हमारा सत्य,
क्या हैं हम और क्या हमारी पहचान? |
इस अध्याय में देते हैं भगवान,
क्षेत्र और क्षेत्रज्ञ का ज्ञान ||

यह शरीर है क्षेत्र और जो उसे जाने,
वो हैं क्षेत्रज्ञ- वो आत्मा |
और वो जो हैं हर क्षेत्र का क्षेत्रज्ञ,
वो एक अनंत परमात्मा ||

इस क्षेत्र में हैं वो अव्यक्त उर्जा,
मन, बुद्धि, अहंकार और पंचतत्व ||
साथ में हैं कर्म-इंद्रियाँ, ज्ञान-इंद्रियाँ,
और पाँच विषयों का भी अस्तित्व ||

सुख-दुख और इच्छा-द्वेष,
यह सब हैं इस क्षेत्र के विकार |
चेतना, धृति और धारण करने वाला शरीर,
हैं उसका आकर ||

जैसे अमृत पाने के लिए,
हमें करना पड़ता हैं मंथन |
वैसे ही ईश्वर में लीन होने के लिए,
ये है ज्ञान के साधन ||

ना अभिमानी, ना दंभी, जो हो सरल,
शुद्ध और ना करें किसी प्रकार की हिंसा |
स्थिर अंतःकरण से, रखे मन और,
इंद्रियों पर काबू, और रखे क्षमा की क्षमता ||

सारे लोकों के भोगो से निरासक्त,
निरहंकारी, और जीवन चक्र के सत्य का दर्शनार्थी |
ना घर-परिवार से लगावट या ममता,
प्रतिकूल और अनुकूल समय में समचितार्थी ||

जो उस ईश्वर की भक्ति में लीन हो,
और संसार से रखे कर्तव्य-सीमित कारोबार |
इस अध्यात्म और तत्व को जानना ही है ज्ञान,
बाकी सब है अज्ञान का अंधकार ||

वो परब्रम्ह है ना सत ना असत,
और जिसका न कोई आदि है न अंत |
वो एक ही जानने योग्य है,
जिसे जान कर मिले परम आनंद अत्यंत ||

अनगिनत हाथ, पैर, नेत्र, सिर और आँखों वाला,
ईश्वर ही सब में स्थित है |
जो इंद्रियों के विषयों में और सबका भर्ता होते हुए भी
उन सब से रहित है ||

यही नहीं, हर चर-अचर वस्तु में वो ही है,
वो दूर भी है और पास भी |
त्रिमूर्ति ईश्वर का रूप, जो देता है,
सबको अलग-अलग एहसास भी ||

परम-ज्योति, और सबके हृदय में स्थित,
वो एक ही है जानने वाला ज्ञान |
वो भक्त उस ईश्वर को पाता है,
जिसे हो जाता इस क्षेत्र-क्षेत्रज्ञ का ज्ञान ||

पुरुष और प्रकृति हैं अनादि, और प्रकृति से जन्मे हैं
तीनों गुण और सारे विकार |
प्रकृति से उत्पन्न होते हैं सब कार्य और कर्ण,
जिन्हें भोगता है पुरुष हर बार ||

प्रकृति में स्थित, पुरुष भोगता है उसके गुण,
और लेता है जन्म अच्छे या बुरे |
वही साक्षी, वही मार्गदर्शक, वही भर्ता, वही भोक्ता,
वो परमात्मा है सब से परे ||

इस प्रकृति-पुरुष के ज्ञान को जान,
मनुष्य जीवन-मृत्यु के चक्र से मुक्त हो जाता है |
इसी पड़ाव पर कोई ध्यान-योग, कोई सांख्य-योग,
और कोई निष्काम कर्मयोग से आता है ||

जो खुद उसे तत्व से नहीं जानते, वो दूसरे ज्ञानियों को,
सुन कर, श्रद्दा से उस पड़ाव पर आते हैं ||
जो सब में क्षेत्र-क्षेत्रज्ञ का संयोग और नष्ट होती चीज़ों में,
अनश्वर को देखे, वे सत्य देख पाते हैं ||

जो सब में ईश्वर को देखते हैं और जानते हैं कि,
आत्मा अनश्वर है, वो परमगति पाते हैं |
यह जान कर कि प्रकृति से है सब कर्म,
और आत्मा है सिर्फ़ अकर्ता, वे सच्चा ज्ञान पाते हैं ||

जो अनेकता में देखे उस एक ईश्वर को,
और देखे उस एक से आई अनेकता, वो ब्रम्ह-ज्ञानी हो जाता है |
वो अनादि गुणातीत ईश्वर, इस शरीर में रह कर भी,
ना कुछ करता है और उससे अलिप्त रह पाता है ||

शरीर में बसी आत्मा वैसे ही दूषित नहीं होती,
जैसे सूक्ष्म आकाश सब जगह होते हुए भी दूषित नहीं होता |
क्षेत्रज्ञ का प्रकाश क्षेत्र को वैसे ही प्रकाशित करता है,
जैसे सूरज अपने प्रकाश से ब्रह्मांड को है भिगोता ||

जो भी इस क्षेत्र और क्षेत्रज्ञ का भेद, और इस विकारों,
से युक्त प्रकृति से उबरने का उपाय जान लेते हैं |
वो ही ज्ञानी उस परमात्मा को पा कर, उसी प्रभु की कृपा से,
मिले ज्ञान-चक्षु से उसे तत्व से जान लेते हैं ||

आओ अपने मन से मिटा दें,
यह राग, यह द्वेष, यह बुरा और यह अच्छा |
अगर जो माँगा, वो मिल गया तो “हरि कृपा”,
और नहीं मिला तो “हरि इच्छा" ||

अध्याय १४ - गुणत्र्य-विभाग योग

आज यूँ लगता है कि यह जीवन,
अज्ञान के अंधेरे में है बीता |
जीवन-ज्ञान और विज्ञान की,
सच्ची सीख है भगवद् गीता ||

कौन है असली कर्ता,
और कैसे होते है सारे कर्म? |
इस अध्याय में भगवान देते हैं,
तीनों गुणों का मर्म ||

ना वापस आने की चिंता,
और ना अंत समय का कष्ट |
इस ज्ञान को पाकर और समझकर,
दोनों हो जाते है नष्ट ||

इस संसार की हर एक वस्तु,
जीव और आकृति |
इनका कारण है ईश्वर,
और उनकी मायावी प्रकृति ||

उस जीवात्मा को बाँध देते हैं,
इस शरीर से कस-कस |
इसी प्रकृति के तीन गुण,
सत्व, रजस और तमस |

सत्व गुण निर्मल, दोषरहित,
होने के कारण प्रकाश देता है |
पर वह भी आत्मा को सुख और ज्ञान की,
आशा से बाँध लेता है ||

रजोगुण से कामना और आसक्ति,
मनुष्य के भीतर घर कर ज़ाती हैं |
इसी कारण उसकी आत्मा,
कर्मों और कर्मफल की चाह से बँध जाती है ||

तमोगुण है अज्ञान की उपज,
जो करती है ज्ञान का ख़ात्मा |
इसके वश में प्रमाद, आलस्य,
और निद्रा में फँस जाती है आत्मा ||

अगर प्रकृति ही है कर्ता,
तो मनुष्य के पास क्या रह जाता है? |
यह क्षमता कि दबाकर दो गुण,
वो तीसरे को उबार पाता है ||

तन-मन में शांति, प्रकाश और,
ज्ञान है सतोगुण के बढ़ने के लक्षण |
रजोगुण बढ़ने से, जीवन में आते हैं लोभ,
स्वार्थ और अशांति के क्षण ||

अंधेरा, मोह, और आलस,
ये सब हैं तमोगुण के बढ़ने के आसार |
मरने पर, तमोगुणी जन्तु लोक, रजोगुणी मनुष्य लोक,
और सतोगुणी है स्वर्ग का हक़दार |

सत्वगुण से ज्ञान, रजोगुण से लोभ और,
तमोगुण से अज्ञान की ओर जाओगे |
अर्थात् जिस गुण से प्रेरित होकर जैसा कर्म करोगे,
वैसा ही फल पाओगे ||

जिस मनुष्य को असली कर्ता का हो जाता हैं ज्ञान,
और जिसका किसी गुण से नहीं वास्ता |
वो ही है तत्व ज्ञानी, जिसे, जनम-मृत्यु से परे,
मिल जाता है परमात्मा तक जाने का रास्ता ||

जिसके मन में, मिलने की खुशी,
और ना मिलने का गम, नहीं आता है |
वो ही ज्ञानी, इन गुणों से ऊपर उठ कर
गुणातीत हो जाता है ||

इन गुण के बरतने को देखता है,
जो बनकर गुणातीत साक्षी की मूर्ति |
समभाव से अपनाए दुख-सुख, मूल्यवान-मूल्यहीन,
प्रिय-अप्रिय और निंदा-स्तुति ||

मान-अपमान, मित्र-शत्रु से परे जो,
अपने अभिमान को गला देता है |
ऐसे गुणातीत भक्त को वो,
सच्चिदानंद ब्रह्म अपने में मिला देता है ||

यह समझना कि "हम करते है सब कार्य",
यह सबसे बड़ा भ्रम है |
कर्ता, धर्म, आनंद, अमृत, अव्यय,
और अनंत सुख, वो परम ब्रह्म है |

आओ अपने मन से मिटा दें,
यह राग, यह द्वेष, यह बुरा और यह अच्छा |
अगर जो माँगा, वो मिल गया तो “हरि कृपा”,
और नहीं मिला तो “हरि इच्छा" ||

अध्याय १५ - पुरषोत्तम योग

आज यूँ लगता है कि यह जीवन,
अज्ञान के अंधेरे में है बीता |
जीवन-ज्ञान और विज्ञान की,
सच्ची सीख है भगवद् गीता ||

क्या है यह संसार? कौन हूँ मैं ?,
और कौन हैं पुरुषोत्तम? |
इस अध्याय में हैं इन तीनों का रिश्ता,
ज्ञान सबसे उत्तम ||

संसार है वो वृक्ष,
जिसकी ऊपर की ओर हैं जड़े |
टहनियाँ फैली नीचे,
जो वेद-ज्ञानी को ही समझ पड़े ||

नयी वासनाएँ और तीनों योनियाँ,
ये तीन गुण ही सींचते हैं |
मैं, मेरा और मेरे लिए की जड़ें,
हमें इस संसार की ओर खींचते हैं ||

कोई ना जाने इस पेड़-रूपी जगत का सच,
जिसे असंग ही काट पाता हैं |
जो उस आदि पुरुष जन्मदाता से जुड़े,
फिर संसार में वापस नहीं आता हैं ||

जो निर्मोह, असंग, नीर्द्वंद, आत्म संतुष्ट हैं,
और जिनका इच्छाओं से ना कोई काम |
वो पहुँचे इस सूरज, चाँद और अग्नि की रोशनी से परे,
उस ईश्वर के परम धाम ||

हर आत्मा, परमात्मा का ही हैं अंश,
पर बँधी हैं पाँच इन्द्रियों और मन से |
इन्हीं को ले के, यह आत्मा आए नये तन में,
निकल के पुराने तन से ||

आँख, कान, त्वचा, जीभ और नाक से,
मन भोगता हैं संसार की हर वस्तु |
आत्मा का सच जानने के लिए चाहिए,
शुद्ध अंतःकरण और ज्ञान-रूपी चक्षु ||

सूर्य, चाँद और आग के,
प्रकाश में वो एक ईश्वर ही है |
वो है जीवन दायी ऊर्जा,
और वो जीवन रस का भंडार भी है ||

हमारी पाचन शक्ति, सांसो का आना-जाना,
उसी ईश्वर की हैं निशानी |
याद वो, ज्ञान वो और भूले भी वो,
वो ईश्वर ही हैं वेदों का सच्चा ज्ञानी ||

वो जो नष्ट हो जाए वो है क्षर,
और अनश्वर हैं अक्षर |
इनसे परे, तीनों लोकों का कर्ता-धर्ता
है वो पुरुषोत्तम ईश्वर ||

इस पुरुषोत्तम का ज्ञान हैं पूर्ण ज्ञान,
जिसे पाकर आती है संपूर्ण भक्ति |
जो इसे समझ जाता है, उसे मिल जाती है,
वेदों के ज्ञान की अद्भुत शक्ति ||

आओ अपने मन से मिटा दें,
यह राग, यह द्वेष, यह बुरा और यह अच्छा |
अगर जो माँगा, वो मिल गया तो “हरि कृपा”,
और नहीं मिला तो “हरि इच्छा" ||

अध्याय १६ - दैवासुरसंपद-विभाग योग

आज यूँ लगता है कि यह जीवन,
अज्ञान के अंधेरे में है बीता |
जीवन-ज्ञान और विज्ञान की,
सच्ची सीख है भगवद् गीता ||

देवों के सदगुण भी हम में,
असुरों के अवगुण भी अपने में पाएंगे हम |
इस अध्याय में इन गुणों का समझकर,
खुद को ही समझ पाएंगे हम ||

दैवी वो जो अभय, स्वच्छ, शुध्ह, दृढ़योगी,
तपस्वी, इंद्रजीत और सच्चा दानी |
निष्काम कर्मयोगी, तेजस्वी, स्वाध्यायी,
धैर्यधारक और सरलता हैं जिसकी निशानी ||

अहिंसक, सत्यवादी, क्रोधरहित, सामर्थ्युक्त क्षमाशील,
त्यागी, दयालु और शांति से युक्त |
ना देखे दूसरों में एब, माया से हो परे,
नम्र, विनयशील, हो द्वेष, घमंड और बेचैनी से मुक्त ||

आसूरी वृतियाँ हैं पाखंड, घमंड, क्रोध,
पूर्ण कठोरता, झूठा अहंकार और अज्ञान |
आंतरिक दैवी स्वभाव दे मुक्ति,
और कृत्रिम आसुरी स्वभाव बाँधे, यही हैं सच्चा ज्ञान ||

जिनसे न होते कर्तव्य, न त्यागे जाते अकर्तव्य,
न हो शुद्ध, न सदाचारी और न सच्चे |
ऐसे आसुरी लोगो में ना होती श्रद्धा, न ज्ञान,
जिन्हें लगे संसार के भोग ही सबसे अच्छे ||

जो घमंड और अभिमान के नशे में ढूँढ रहे,
कभी न मिलने वाली कामना |
उसी खोज में अज्ञान से,
उन्हें पड़ता हैं हर बुराई और भ्रष्टाचार को थामना ||

वो आसुरी स्वभावी तो जीवन भर,
भोगों और चिंताओ से घिरे रहते है |
सैंकड़ों आशाओं को पाने के काम,
और क्रोध से जिनके सर फिरे रहते हैं ||

कितना पाया, क्या कमाया, किसको हराया,
अरे! में ही हूँ भगवान |
ऐसे अहंकारी अज्ञानी असुरों को,
मिले सिर्फ घोर नर्क में स्थान ||

इन पाखंडी, धन के नशे में धुत लोगों का आचरण,
मुंह में राम, बगल में छुरी |
सदपुरषों से नफ़रत, अहंकार, घमंड, कामना,
और क्रोध में हो जाए जिनकी उम्र पूरी ||

ऐसे पापी और क्रूर कर्म वालों को मिले,
नीची योनियों में जनम हर बार |
ऐसे लोगों को ना होती भगवत प्राप्ति,
और मिले घोर नरक का द्वार ||

काम, क्रोध और लोभ, इन तीनों,
से खुलते हैं नरक के द्वार |
जो इन्हे त्याग दे, वो पाए परमगति,
और वो हो जाता हैं पार ||

उसे मिले ना सिद्धि, ना सुख,
ना परमगति, जो जिए ज़िंदगी मनमानी |
शास्त्र-नियमित कर्तव्य-कर्म करना ही है,
दैवी स्वभाव की सच्ची निशानी ||

आओ अपने मन से मिटा दें,
यह राग, यह द्वेष, यह बुरा और यह अच्छा |
अगर जो माँगा, वो मिल गया तो “हरि कृपा”,
और नहीं मिला तो “हरि इच्छा" ||

अध्याय १७ - श्रद्धात्रय-विभाग योग

आज यूँ लगता है कि यह जीवन,
अज्ञान के अंधेरे में है बीता |
जीवन-ज्ञान और विज्ञान की,
सच्ची सीख है भगवद् गीता ||

क्या हैं सच्ची श्रद्धा, सही आहार,
सच्चा यज्ञ, तप और दान? |
इस अध्याय में हमें देते हैं भगवान,
इन सब का गहरा ज्ञान ||

सवाल ये कि शास्त्र-विहीन श्रद्धा का हैं,
सात्विक, राजसिक या तामसिक रूप? |
जवाब ये कि जैसा अंतःकरण,
वैसी श्रद्धा और जैसी श्रद्धा, वैसा ही स्वरूप ||

सात्विक पुरुष देवों क़ी, राजसी यक्षो-राक्षसों की,
और तामसी भूत-प्रेतों की करें पूजा |
शास्त्र से परे, लोभी, अहंकारी
और आसक्ति से चूर वो अज्ञानी, असुर से नहीं दूजा ||

इसके अलावा, भगवान ने तीन प्रकार के,
आहार, यज्ञ, तप और दान हैं बताएँ |
रसीले, मनभावन, आयु, बुद्धि,
और बल बढ़ाने वाले आहार सात्विक पुरुष को भाए ||

राजसी पुरुष को भाए, कड़वे और खट्टे आहार,
जो दुख, चिंता और रोगों को लाएँ |
तामसी पुरुष तो रस-रहित, बासी, पुराने,
और बदबूदार खानों में ही सुख पाएँ ||

शास्त्र-विधि युक्त, निष्काम कर्तव्य-कर्म ही हैं,
सात्विक यज्ञ की पहचान |
दंभ और आसक्ति से किए हुए कर्म हैं,
राजसी यज्ञ की पहचान ||

जिन कार्यों में ना हो शास्त्र-विधि,
ना श्रद्धा और ना ही कोई दान |
जो बिना दक्षिणा और बिना मित्रों के हो,
वो हैं तामसी यज्ञ की पहचान ||

पवित्र, अहिंसक, ईश्वर में लीन,
देवों और गुरु-ज्ञानियों की पूजा हैं शरीर का तप |
जिसमें ना हो उद्वेग, ना अहित,
और हो वेद और ईश्वर-नाम, वो है वाणी का तप ||

जिस मन में हो भगवत-चिंतन का भाव,
और जो हो शांत और प्रसन्न |
जो इंद्रियों को करे वश,
और हो आत्म-शुद्ध, यही है मन के तप के लक्षण |

सात्विक तप वो जिसे निष्काम,
और श्रद्धा के भाव से किया जाएँ |
क्षणभंगुर राजसी ताप वो जहाँ,
आसक्ति और पाखंड हो मुख्य क्रियाएँ ||

जो बेवकूफी और ज़िद से शरीर, वाणी और,
मन को पीड़ा पहुँचाए |
और जो औरो की करे हानि,
वो तामसी तप कहलाए ||

कर्तव्य-भाव, निष्काम और देश, काल,
पात्र को सोच कर होता है सात्विक दान |
सिर्फ प्रतिष्ठा बढ़ाने और आसक्ति से भरपूर,
दान ही है राजसिक दान की पहचान ||

जो दान तिरस्कार-भाव से,
अयोग्य देश और काल में दिया जाए |
और जिसके पात्र नीच कर्मों में हो लीन,
वो दान तो तामसिक कहलाए ||

ॐ, तत् और सत्, है उस ईश्वर के नाम,
जिसने रचे वेद, यज्ञ और ब्राह्मण |
उसी ॐ से करते हैं वेदी,
और श्रेष्ठ-जन हर यज्ञ, दान और तप का उद्घाटन ||

तत् में हैं हर यज्ञ, दान और तप का निष्काम,
और भगवत-अर्पण भाव |
सत् में छुपा हैं वो उत्तम कर्म जिसमें हैं सत्य,
श्रेष्ठ और समर्पण भाव ||

जो दान, तप और कर्म बिना श्रद्धा के किया जाए,
वो असत् कहलाए |
ऐसा असत् दान, तप और कर्म तो न इस लोक,
ना उस लोक में काम आए ||

आओ अपने मन से मिटा दें,
यह राग, यह द्वेष, यह बुरा और यह अच्छा |
अगर जो माँगा, वो मिल गया तो “हरि कृपा”,
और नहीं मिला तो “हरि इच्छा" ||

अध्याय १८ - मोक्ष-सन्यास योग

आज यूँ लगता है कि यह जीवन,
अज्ञान के अंधेरे में है बीता |
जीवन-ज्ञान और विज्ञान की,
सच्ची सीख है भगवद् गीता ||

कर्म क्या हैं और क्या है मोक्ष,
और सन्यास का रहस्य |
इस अध्याय में मिटा देते हैं भगवन,
हर प्रकार का संशय ||

प्रश्न यह हैं कि क्या सिर्फ काम्य कर्म त्यागने,
ही मिले संन्यास? |
या सब कर्मो और कर्म-फलों का त्यजना ही है,
त्याग का आभास? ||

यज्ञ, दान और तपरूपी कर्म तो हैं कर्त्तव्य कर्म,
जो करे हमें पुनित |
साथ ही वह सारे श्रेष्ठ कर्म जो हो आसक्ति रहित,
वह भी हैं उचित ||

जिस त्याग में मोह में पडकर, नियत कर्म ही त्यागे जाये,
वह तामसिक कहलाये |
जो व्यर्थ त्याग शरीर के क्लेश के भय से किया जाए,
वह राजसिक कहलाये ||

भाव यह हो कि कर्म ही कर्त्तव्य हैं, विधि वह,
जिसका शास्त्रों में हैं वर्णन |
जिनमे न हो आसक्ति और हो कर्म-फल का त्याग,
वो हैं सात्विक त्याग के लक्षण ||

जो मंगल कर्मों से न हो आसक्त और,
अमंगल कर्मों से द्वेषित नहीं होता |
वो सतोगुणी पुरुष, संशय से रहित,
अपने को ज्ञान और त्याग में है डुबोता ||

सब कर्मों का त्याग तो है असंभव,
सच्चा त्याग तो सिर्फ कर्म-फल का त्याग ही है |
सकामी को मिले मिश्रित कर्म-फल,
त्यागी तो कर्म-फल से बिलकुल ही आज़ाद ही है ||

मन, वाणी और शरीर के सभी कर्मों में,
इन पांच का होता हैं पूरा योगदान |
कर्ता, कुछ कारण, कुछ चेष्टाएँ,
प्रारब्ध कर्म और वह महत्वपूर्ण अधिष्ठान ||

अज्ञान और मैल से हम समझ बैठते है,
कि यह आत्मा ही है कर्ता |
वह ज्ञानी सब कर्म करने पर भी,
कोई कर्म नहीं करता, रहता है अकर्ता ||

ज्ञान, ज्ञाता, और उसका ज्ञेय,
यह तीनो हमें कर्म करने को उकसाते हैं |
कर्ता, करण और क्रियाएं,
यह तीनो मिल कर हर कर्म को बनाते हैं ||

सात्विक ज्ञान से विभिन्नता में भी,
वह एक अविनाशी ईश्वर नज़र आये |
राजसिक ज्ञान से मनुष्य इसी विभिन्नता को,
अपने मन से दूर नहीं कर पाए ||

जो ज्ञान इस शरीर को ही आत्मा समझ कर,
उसी से आसक्त हो जाए |
वह तत्त्व-अर्थ से रहित और तुच्छ ज्ञान,
तो तामसिक ज्ञान ही कहलाये ||

अभिमान और राग-द्वेष रहित नियत कर्म ही है
सात्विक कर्म की निशानी |
अहंकार, परिश्रम और फल-इच्छा युक्त कर्म,
वह हैं राजसिक कर्म की कहानी ||

जिन कर्मों में न परिणाम, हानि, हिंसा या,
सामर्थ्य का विचार आये |
वह अज्ञान से शुरू किये गए कर्म,
तो तामसिक कर्म ही कहलाये ||

अहंकार और आसक्ति-रहित, धैर्य, उत्साह और,
समता से पूर्ण, यह हैं सात्विक कर्ता |
राजसिक कर्ता वह जो हो अभिमानी, आसक्त,
अशुद्ध, लोभी, और हर्ष-शोक में हैं तरता ||

वह जो हो शिक्षा-रहित, घमंडी, धूर्त और,
जो दूसरों के जीवन का नाश ही करवाए |
ना लगाए ध्यान, न परिश्रम,
और हर काम को टाले, वह कर्ता तामसिक कहलाये ||

प्रवृति-निवृति, कर्तव्य-अकर्तव्य, भय-अभय और,
बंधन-मोक्ष को तत्व से जाने, वह बुद्धि सात्विक है |
जो बुद्धि धर्म-अधर्म और कर्तव्य-अकर्तव्य के भेद,
को ही न पहचाने, वह बुद्धि तो राजसिक हैं ||

तमोगुण में डूबी हुई जो बुद्धि अधर्म को ही धर्म,
और हर एक टेढ़ी चीज़ को ही सीधा मान कर चले |
वह बुद्धि तो हैं तामसिक बुद्धि और उसे इस जीवन में,
दुःख और क्लेश, और मरने पर नीची-योनि ही मिले ||

ध्यानयोग से सर्जित वह शुद्ध धारणा जब करे मन, प्राण,
और इन्द्रियों से क्रियाएं, वह धृति सात्विकी कहलाये |
आसक्ति और फल की इच्छा से सर्जित, धर्म, अर्थ,
और काम की तरफ जाएँ, वह धृति राजसी कहलाये ||

दुष्ट बुद्धि वाले पुरुष में उपजी, जो नींद, भय, चिंता,
दुःख और उदासी की ओर ले जाए |
और जो इस तामसिक चक्रव्यूह से बहार ही न निकल पाए,
वह धृति तो तामसिक ही कहलाये ||

वही सात्विक सुख है, जो शुरू में लगे विष जैसा,
पर अंत में अमृत के जैसा बन जाता है |
राजस्कि सुख वह, जो भोगते समय लगे अमृत जैसा,
पर बाद में विष का असर दिखलाता है ||

वह सुख जो शुरू में भी और अंत में भी,
विष के जैसे, आत्मा को मोह लेते हैं |
नींद, आलस और प्रमाद से उत्पन,
ऐसे सुख को ईश्वर तामसिक सुख का नाम देते हैं ||

इस माया से उत्पन तीन गुणों से कोई नहीं हैं परे,
क्या पृथ्वी, क्या स्वर्ग और क्या देव? |
इन्ही गुणों से बने स्वभाव और उससे बने,
ब्राह्मणो, क्षत्रियों, वैश्यों और शूद्रों के कर्म सदैव ||

अंतःकरण और इन्द्रियों को वश में रखना, पूर्ण शुद्धि,
सच्ची क्षमा, सरलता और तपो-धर्म |
आस्तिक बुद्धि, शास्त्रों का ज्ञान और एक ईश्वर का अनुभव,
यह हैं ब्राह्मण के स्वाभाविक कर्म ||

शूरवीरता, तेज, धीरज, कुशलता, दृढ़ संकल्प, दान और,
स्वामी-भाव ही है क्षत्रियों की निशानी |
खेती और सारे व्यापर हैं वैश्यों के,
और सेवा-भाव ही है शूद्रों के स्वाभाविक कर्मों की कहानी ||

अपने स्वाभाविक कर्म में लग कर प्राप्त होती है,
परम-सिद्धि, यह बात तो तय है |
यही कर्म हैं उस परमेश्वर की पूजा,
उस जगत-पिता और सर्वव्यापी ईश्वर की जय है ||

अपने स्वभाव के अनुरूप किया स्वधर्म ही श्रेष्ठ है,
भले पराये धर्म कितने ही लुभाये |
यह बात समझ ले, कि स्वधर्म कभी न त्यागना,
भले उस में कितने ही दोष नज़र आये ||

एक साधक वो जो आसक्ति और स्पृहा-रहित हो कर,
जीत लेता है अंतःकरण |
सांख्य योग के मार्ग पर नैष्कर्म्य सिद्धि को पा कर,
वो करता है ईश्वर के दर्शन ||

एक वो तत्व-ज्ञानी जो हो शुद्ध, विवेकी, इंद्रजीत,
वैरागी और हो राग-द्वेष से दूर |
वो सात्विक अंतःकरण युक्त, काम, क्रोध और,
अहम् का त्यागी, हो ब्रम्ह से भरपूर ||

वह सर्व-प्रसन्न सम्भावी ब्राह्मी, न करे आकांशा या शोक,
और हो जाए भक्ति में तर-बतर |
उस तत्व-ज्ञानी को उसी परम-तत्त्व में लीन हो कर,
हर एक में सिर्फ वासुदेव ही आये नज़र ||

वैसे ही सब कर्मों को निष्काम रूप से करता,
कर्मयोगी भी पा जाता हैं उस परमात्मा का धाम |
शर्त ये कि भगवत पथ पर, समर्पण भाव, समत्वबुध्दि,
और निष्काम भावना से किये जाए सब काम ||

बात सरल है कि अगर ईश्वर में मन लगाएगा,
तो जन्म और मृत्यु से छुटकारा पा जाएगा |
अगर झूठे अहंकार और गुरूर से इस ज्ञान को ठुकराएगा,
तो पूरी तरह से नष्ट हो जाएगा ||

यह भी सच है कि तेरा स्वभाव और तेरे पिछले कर्म,
तुझे आज के कर्मो का संकेत देते हैं |
वैसे ही, हम सब में स्तिथ ईश्वर, अपनी माया से,
हमें अपने कर्मो की दिशा में खींच लेते हैं ||

उस ईश्वर और भगवान् की सम्पूर्ण-शरण के सिवा,
नहीं और कोई गुजारा |
वही है परम शान्ति और अत्यंत परम धाम,
उनका ही है एक सच्चा सहारा ||

यह आश्वासन देते हैं भगवान् कि जो भक्त अनन्य प्रेम,
और अचल मन से करे उनकी पूजा |
और श्रद्धा और विनय-भाव से करे उन्हें प्रणाम,
उसे मिले वह ईश्वर, जिनके जैसा नहीं कोई दूजा ||

सौ बात की एक बात यह, जो सब धर्मो और कर्मों का,
आश्रय त्याग कर, उस परमात्मा की शरण में आता है |
उसके सब शोक और दुःख लुप्त हो जाते हैं,
ईश्वर की कृपा से वह भक्त, सब पापों से मुक्त हो जाता है ||

ध्यान रख, कि यह गीता-ज्ञान उन्हें न सुनाना,
जो तप, श्रद्धा और भक्ति से परे होते हैं |
जो भक्तों को प्रेम और निष्काम भाव से यह ज्ञान बांटे,
वही भक्त सच्चे और खरे होते हैं ||

ऐसे ज्ञान-गुरु तो सर्वश्रेष्ठ और प्रभु के प्यारे होते हैं,
और गीता का पाठ ही ज्ञान-यज्ञ और पूजा है |
श्रद्धा और दोषदृष्टि-रहित, जो पढ़े गीता-शास्त्र,
उस पाप-मुक्त का घर श्रेष्ठ लोको से नहीं दूजा है ||

इस ज्ञान को पा कर अर्जुन का मोह नष्ट हो गया,
और वह हो गया अपने कर्तव्य को करने को तैयार |
वहीं पर है श्री, विजय, विभूति और अचल निति,
जहाँ हैं कृष्ण, अर्जुन और गीता की मधुर रसधार ||

आओ अपने मन से मिटा दें,
यह राग, यह द्वेष, यह बुरा और यह अच्छा |
अगर जो माँगा, वो मिल गया तो “हरि कृपा”,
और नहीं मिला तो “हरि इच्छा" ||

पुनीत ओझा

पुनीत ओझा एक प्रतिष्ठित नौ-परिवहन विशेषज्ञ हैं, जो कविता, अध्यात्म, और साहित्य के क्षेत्र में गहरी रुचि रखते हैं। उन्होंने चेन्नई, दिल्ली, मुंबई और लंदन में शिक्षा प्राप्त की है, जिससे उनकी शैक्षिक पृष्ठभूमि बेहद विविध और समृद्ध है। पुनीत मूलतः गुजरात के निवासी हैं पर पिछले १८ वर्षों से सिंगापुर में रह रहे हैं और वहीं से अपने व्यवसायिक जीवन का संचालन कर रहे हैं। यह उनकी पहली प्रकाशित पुस्तक है, जो उनके साहित्यिक और आध्यात्मिक यात्रा का एक महत्वपूर्ण मील का पत्थर है।

भगवद् गीता की विशेषता यह है कि जितने भी विद्वानों ने गीता का अध्ययन किया, उन्होंने या तो उसका अनुवाद किया या उस पर विशद टिप्पणी/व्याख्या लिखी। इस पुस्तक की विशिष्टता है कि यह गीता के श्लोकों के गूढ़ सार को सरल और सुगम कविताओं के माध्यम से प्रस्तुत करती है। इन सरल कविताओं के कारण, यह पुस्तक न केवल सहजता से पढ़ी जा सकती है, बल्कि इसका अर्थ भी आसानी से समझा जा सकता है। प्रत्येक श्लोक के मर्म को छंदों में ढालकर, यह पुस्तक गीता के अध्ययन और आत्मसात का एक मधुर और आनंदमय मार्ग प्रशस्त करती है। यह गीता को नई दृष्टि से देखने और जीवन में उतारने का एक सुलभ और प्रेरणादायी माध्यम है, जो पाठकों को एक नई प्रेरणा और आनंद की अनुभूति कराता है।

इनर सर्च फाउण्डेशन, मुंबई

9 788195 959945